तीन साथी

अभीक को पिता का धन, विभा का प्रेम और ऐश्वर्य तथा अन्य सांसारिक सुख बेकार से प्रतीत हुये। उसे कला से लगाव था और अपनी साधना पूर्ण करने के लिये उसने सहज ही इन सब वस्तुओं को ठुकरा दिया।

क्रांतिकारी होते हुये भी नवीन माधव ने देश-विदेशों का भ्रमण करते हुये ज्योलोजिकल शास्त्र का अध्ययन किया और यश और कीर्ति के साथ ही वह एक रजवाड़े में उच्च पद पर आसीन हो गया। अपनी विद्या, यश, आदि के सहारे ही उसने प्रेम करना चाहा अच्चरा के साथ। नवीन ने समझा था कि उसकी ख्याति को सुन कर ही कोई भी लड़की सहर्ष उसकी गृहणी बनने को तत्पर हो जायेगी। मगर ऐसा न हो सका, यह उसे तभी ज्ञात हुआ जब अच्चरा से सम्पर्क हुआ।

रेवती एक साधारण श्रेणी के परिवार का लड़का था। मगर उसकी योग्यता और ख्याति से वशीभूत होकर सोदिनी नामक धनी महिला ने अपनाना चाहा—धन, रूप और अनुसंधान के पर्याप्त साधन जुटाये ताकि वह उसके वश हो जाये। कुछ समय तक तो रेवती इन प्रलोभनों में फँसा रहा मगर जैसे ही उसकी पालिका—उसकी बुआजी का आदेश मिला वह पालतू जानवर के समान अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने वाले इन तमाम साधनों को लात मार कर चला गया।

इन तीनों आख्यानों में रवीन्द्र बाबू ने तीन प्रकार के युवकों की मनोदशाओं का वर्णन किया है और इतना सजीव चरित्र-चित्रण किया है कि पाठक प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकते।

तीन साथी

लेखक :

रवीन्द्रनाथ टैगोर

प्र भा त प्र का श

प्रथम बार : १९५५
मूल्य : दो रुपया

अनुवादक :
गिरीश कुमार बी० ए०

प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन मथुरा।
मुद्रक : दी न्यु रायल प्रेस, मथुरा।

रविवार

मेरी इस कहानी का प्रधान नायक प्राचीन ब्राह्मण वंश का एक लड़का है। कारोबार के मामले में उस लड़के के पिता पूर्ण कुशल हैं और धर्म कर्म में शाक्त सम्प्रदाय के रस में पूरी तरह डूबे हुए हैं। वकालत करते करते उनकी अवस्था काफी हो चली है अतः अब वह भीड़ भाड़ से भरी हुई अदालत में प्रेक्टिस करने नहीं जाते। उनका मत है कि इस लोक के अतिरिक्त कोई दूसरा लोक भी है, इसीलिए वह अपना दूसरा लोक सुधारने के लिये धर्म कर्म भी करते रहते और इस लोक में आराम से जीवन व्यतीत करने के लिये व्यक्तियों को जो घर पर आते, वकालत के दाँव पेन्चों को बतलाकर रुपया पैदा करते रहते, और इस भाँति वे अपने इह लोक तथा परलोक दोनों को बनाने में व्यस्त हैं। इन दो कार्यों के अतिरिक्त वे और कुछ नहीं करते है।

इस प्रकार के परिवार में, जहाँ कि धर्म ही प्रधान हो, यदि कोई ऐसा नवयुवक, जोकि अपनी कुल परम्परा की तनिक भी चिन्ता न करे, उत्पन्न हो जाये तो वह युवक उस परिवार के लिये विषैला काला नाग बनकर अपने ही विष से अपने परिवार को तथा धर्म को डस लेता है और वह अपने परिवार में कलह का एक कारण हो जाता है। इस आचार विचार वान ब्राह्मण परिवार में ऐसे ही एक नवयुवक का प्रादुर्भाव हुआ और वही हमारी कहानी का नायक है।

समाज में अनेक प्रकार के संस्कार होते आये हैं अतः पिता ने बड़ी धूमधाम से बालक का नाम संस्करण किया। बालक का नाम 'अमयाचरण' रखा गया। अमयाचरण जाति पाँति, धर्म आदि के झंझटों से कोसों दूर था अतः उस विद्रोही एवं उत्साही नवयुवक ने अपना नाम बदल कर 'अभीक कुमार' कर दिया ताकि उसके नाम के पीछे कुल धर्म की कोई छाप न लगी रह जाय।

अभीक को देखने से लगता मानो कि वह कोई विदेशी हो; उसका शरीर गठा हुआ, आंखें कंजी और नाक लम्बी है। उसकी ठोड़ी की बनावट से ऐसा लगता है मानो कि अन्यायों का सामना करने के लिये वह पत्थरों की भाँति दृढ़ है। उसके हृदय में उत्साह तथा घूंसे में असीमित बल है और यही कारण था कि बहुत से लोग लड़ाई झगड़े की बात आते ही उसको दूर से ही नमस्कार कर देते हैं।

अभीक के इन विचारों से उसके पिता अम्बिकाचरण को कोई विशेष उद्विग्नता नहीं हुई। उनके ताऊ बाबू प्रसन्नचन्द्र न्यायरत्न ही स्वयं उनके लिये एक उलझन भरी समस्या हैं। वह न्यायरत्न पूरे तार्किक हैं। अपने परिवार में बैठे २ वह संस्कृत आदि के अनेक उदाहरण देते हुए ईश्वर के अस्तित्व पर बड़ी गरमा गरम बहस करते रहते हैं। उनके तर्कों का किसी पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है। उनका मत है कि धर्म की कोई न कोई वस्तु घर में

होनी चाहिये फिर चाहे धर्म पर विश्वास नहीं भी हो तो भी धर्म पर कोई आँच नहीं आती है। अभीक उनके विचारों से सहमत नहीं है। इस प्रकार के विचारों को वह फटे पुराने कपड़ों की भाँति, जो तन से उतार फेंकने योग्य हो जाते हैं, ग्रहण नहीं करता है। घर के आस पास रहने वाले दम्पति अभीक की धर्म रहित बातें सुनने तथा उन बातों को बाबू अम्बिका चरण के कानों में डालते रहते हैं किन्तु पिता अपने पुत्र की इन बातों की ओर अधिक ध्यान नहीं देते हैं। यहाँ तक कि शिकायत करने वालों को वह अपने घर के दरवाजे से बाहर निकल जाने की आज्ञा दे देते हैं। यदि अपराध इतना अधिक गम्भीर नहीं हो कि वह अन्यों की दृष्टि तक आये, तब तो मनुष्य उसे किसी न किसी भाँति छिपा ही लेता है; किन्तु जब वह छोटा सा अपराध अपना विकराल रूप धारण कर लेता है तब मनुष्य से उसे छिपाये नही छिपाया जा सकता है। एक बार अभीक इतनी अति कर बैठा कि उसके पिता बाबू अम्बिका चरण को उसका अपराध असह्य हो उठा। हिन्दू समाज के परिवारों में एक देवी या देवता होता है, जिसकी आराधना विशेष रूप से की जाती है, और उसे कुल देवी या कुलदेवता कहा जाता है। इन लोगों की कुल देवी थी 'भद्रकाली'। लोगों के कथनानुसार वह जाग्रत देवी अर्थात् चमत्कारी देवी, मानी जाती है। अभीक का एक मित्र था भज्जू, जो कि देवी की अप्रसन्नता से बहुत डरता था। अभीक को अपने मित्र की यह विचारधारा अच्छी न लगती थी और इसलिये उसने देवी के वेदी गृह में कुछ ऐसा कार्य कर डाला जिससे कि उसके मित्र की देवी पर श्रद्धा कम हो जाय। जब अभीक की यह बात बाबू अम्बिका चरण के कानों में पहुंची तब उन्होंने फटकारते हुए कहा—"तुम जैसे नास्तिक मेरे घर में रहने योग्य नहीं। जाओ, निकल जाओ यहाँ से"। वास्तव में धर्म के लिये इस प्रकार की कठोरता जो कि धर्म की रक्षा के लिए अपने पुत्र को घर से निकल जाने का आदेश दे सके, एक ब्राह्मण कुल में

ही सम्भव हो सकती है।

अभीक को अपने पिता के यह वचन सहन नहीं हुए और अपनी माँ के पास जाकर बोला—"माँ, देवी को तो मैं बहुत दिनों से छोड़ चुका हूँ और ऐसी अवस्था में देवी भी मुझे छोड़ सकती है। किन्तु मैं जानता हूँ कि यदि मैं तुम्हारे सामने अपना हाथ पसारूँगा तो मुझे तुम्हारा प्रसाद अवश्य ही प्राप्त होगा और मुझे प्रसाद ग्रहण करने से देवी नहीं रोक सकेगी। वहाँ उसकी देवताई नहीं चलने की, चाहे वह कितनी ही चमत्कारी देवी क्यों न हो।"

अपने पुत्र की यह बात सुन माँ का हृदय रो उठा। आँखें पोंछ माँ ने आँचल से एक नोट खोलकर उसे देना चाहा; किन्तु उस नोट को लौटाते हुए पुत्र ने कहा—"माँ! मैं इस नोट को तुम्हारे हाथ से तब ही लूँगा जब मेरे पास भी नोट हो जायेंगे और मुझे इसकी अधिक आवश्यकता नहीं रहेगी। किसी वस्तु को प्राप्त करने में समय भी लगता है और परिश्रम भी और उसे बिना परिश्रम के प्राप्त कर लेने में यद्यपि समय और परिश्रम भी नहीं लगता किन्तु आनन्द नहीं आता।"

इस संसार में प्रत्येक मनुष्य को कोई न कोई शौक अवश्य होता है अच्छा या बुरा। अभीक को भी दो शौक हैं, पहला चित्रकला का तथा दूसरा था मशीनों के पुर्जों को तोड़ने का। देवी की कृपा से उसके पिता के पास एक नहीं तीन २ मोटरें हैं जोकि केवल घूमने फिरने के ही काम आती हैं। वह मिस्त्रियों को उन मोटरों को ठीक करते देखता तो उसे भी मोटर ठीक करने का शौक लग गया उसके अतिरिक्त उसके पिता के एक मुश्किल का मोटर का कारखाना है, जहाँ जाकर वह पुर्जों को ठीक किया करता है।

चित्रकला सीखने के लिये वह सरकारी आर्ट स्कूल में जाने लगा

है। उसको अपने हृदय में विश्वास हो गया है कि यदि वह अभ्यास करता रहा तो थोड़े ही समय में उसका मस्तिष्क पूरी तरह से कार्य विकासित हो उठेगा और हाथ मशीन की भाँति चल उठेंगे। वह इस प्रचार में लग गया कि वह कलाकार है। उस प्रचार को बढ़ावा देने के लिये उसने एक प्रदर्शनी का आयोजन किया तथा समाचार पत्रों में विज्ञापन दिया "भारत का सर्वश्रेष्ठ कलाकार अभीककुमार, बंगाली टीचशित।" इस प्रदर्शनी में अपने चित्र भेज रहा है। अभीक की यह प्रशंसा उसके विरोधियों के हृदय में खटकने लगी; किन्तु फिर भी बहुत से लड़के लड़की उसके शिष्य तथा शिष्याऐं बन गए। उन लोगों ने विरोधियों को चेतावनी दी ' फिलिस्टाइन !"

दुर्दिनों में एक बार अभीक ने सोचा कि उसके पिता के धन ने ही उसके नाम तथा कला को चमकाया है। पिता के धन के ही कारण उसकी प्रतिभा आज चारों ओर फैल रही है। अभीक ने जीवन में एक और अनुभव किया कि आधुनिक लड़कियों का धन उनकी श्रद्धा पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता। अभीक की शिष्याओं ने उसकी प्रशंसा करते हुए अंतिम समय तक कहा "अभीक बाबू एक ऊंचे कलाकार हैं।" किन्तु दो लड़कियों को छोड़कर अन्य कोई भी लड़की कला मर्म तक को नहीं समझती है और उनके द्वारा अपनी कोरी प्रशंसा सुनकर अभीक का हृदय जल उठता है।

इसके बाद का अभीक के जीवन का इतिहास सागर की भाँति गहन तथा छिपती हुई तारिकाओं की भाँति अस्पष्ट है। मैली टोपी और तेल स्याही लगी, नीले रङ्ग की कमीज, पतलून पहन कर वह पहले मिस्तरी फिर हैड मिस्तरी का कार्य करने लगा। मुसलमान खलासियों के साथ बैठ कर सस्ता माँस तथा रोटी खाकर वह अपने दिन सस्ते में गुजारने लगा। लोगों ने कहा "अभीक तो मुसलमान हो गया है।" उसने उनकी चिन्ता

न करते हुए उत्तर दिया "मुसलमान क्या नास्तिक से भी बुरे हैं !" और बाद में धन इकट्ठा हो जाने पर वह पुनः कला क्षेत्र में उतर आया। एक बार फिर से उसके पास शिष्य एवं शिष्याओं का जमघट लग पड़ा। आज कल की कुछ लड़कियों ने उसके चित्रों की आलोचना की किन्तु अभीक के हृदय पर कोई प्रभाव न पड़ा। वे आपस में बैठकर एक दूसरे की बुराई करने लगे।

विभा इस गुट में सम्मिलित न हुई थी। कालिज के प्रथम जीवन में ही उसका अभीक से परिचय हो गया था। तब अभीक युवा काल में पदार्पण कर रहा था तथा उसकी अवस्था अट्ठारह वर्ष की थी। चेहरा, जिस पर ब्रह्मचर्य का तेज सूर्य की भांति चमक रहा था, भरा हुआ तथा लाल था। इसी कारण अवस्था में उससे बड़े लड़कों ने भी उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हो उसे अपना अगुआ बनाया था।

ब्रह्म समाज में लालन पालन होने के कारण विभा पुरुषों से मिलने में संकोच नहीं मानती थी; किन्तु कालिज में वह लड़कों से नहीं बोल पाती थी। विद्यार्थी उसकी ओर देखते और कोई कोई तो असभ्य इशारे तथा व्यङ्ग तक कर बैठता। एक दिन तो एक शहरी लड़के ने विभा के साथ अशिष्टता का व्यवहार किया। जब यह बात अभीक के कानों में पहुँची तो वह बहुत ही क्रोधित हुआ और उस लड़के को घसीट कर ला, विभा के पैरों में डालते, हुए उसको उससे क्षमा मांगने पर विवश कर दिया। लड़के को नतमस्तक हो क्षमा मांगनी पड़ी। इसके बाद से ही अभीक ने विभा का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर ले लिया। लड़के यह सहन नहीं कर सके; उन्होंने अभीक पर व्यङ्ग कसने आरम्भ कर दिये, किन्तु अभीक को इसका काफी अभ्यास था और वे व्यङ्ग उसके विशाल वक्षस्थल से टकरा २ कर शीसे की भाँति चूर चूर हो गये। उसने उनकी परवाह भी नहीं की। विभा शर्मीली थी। जब उसने सुना कि उसके प्रति लड़कों के ऐसे विचार

हैं तब वह अत्यधिक सकुचाई। अब अभीक के साथ रहने में उसके हृदय को एक अज्ञात आनन्द मिलने लगा।

विभा सुन्दर थी; उसके गुलाब जैसे मुख पर सुन्दरता के अतिरिक्त शील, जो नारी का रत्न है, अधिक है। न जाने उसकी चितवन में कौनसा जादू है कि जो भी उसको एक बार देख लेता है वह ही सदा के लिए उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। एक बार अभीक ने उससे कहा-"विभा! तुम अपूर्व सुन्दरी हो और तुम्हारा कला से परिपूर्ण सौन्दर्य हर एक जन साधारण के लिये नहीं है वरन उसको देखने का अधिकार तो केवल कलाकार के नेत्रों को ही है। तुम्हारे मुख की समता लिओनार्डो डा विन्ची के चित्रों ही से की जा सकती है।"

एक बार कालिज की परीक्षा में विभा पास हो गई तथा अभीक फेल; इस पर वह खूब रोई और उसे अपने ऊपर बहुत क्रोध भी आया, मानों कि वह अपमान अभीक का नहीं वरन् स्वयं उसका ही हो। एक दिन जब वह अपने मन के प्रबल वेग को नहीं रोक सकी तब अभीक के पास आई और बोली—"आप हैं जो कि रात दिन स्त्रियों के पीछे पड़े रहते हैं जब ही तो परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। मुझे आपके इस कार्य पर बड़ी लज्जा आती है।"

अभीक और विभा की इस बात को पास के दालान में खड़ी विभा की एक सहेली ने सुन लिया। आंखें मटकाती हुई वह बोली—"क्या बात है? जहाँ देखो तुम ही तुम! विभा तुम पर सुन्दरता और अभिमान सब अभीक के ही कारण है ना?" अभीक इस बात को सहन नहीं कर सका वह बोला—"रट रट कर परीक्षा पास करने वाले यह समझ बैठे हैं कि अभीक गलत मार्ग पर चल रहा है। मुझे चित्र बनाते देख कर तुम्हारी आँखों में आंसू भर आते हैं और जब मैं तुम्हें कोरी पढ़ाई से रट रट कर

पास होते देखता हूँ तब मेरी आंखों का पानी सूख जाता है। तुम हम को नहीं समझ सकतीं क्योंकि समाज में तुम आदर्श रूप से समझी जाती हो तथा हम लोग बदनाम दल के अगुआ।"

उस चित्रकला को लेकर दोनों के हृदयों में काफी हलचल उत्पन्न हो गई थी। यह सच है कि विभा अभीक के चित्रों को नहीं समझ सकती है और जब अन्य लड़कियां अभीक के चित्रों को देखकर उसकी प्रशंसा करती हैं तथा उसे धन्यवाद देती हैं तब यह देखकर विभा का हृदय जल उठता है। वह यह सहन नहीं कर पाती और उन्हें मूर्ख समझती है। किन्तु जब अभीक देखता कि विभा उसकी प्रशंसा नहीं करती है तब वह मछली की भांति छटपटाने लगता है। देशवासियों ने समझा कि अभीक के चित्र पागलपन लिये हुए हैं, और मन ही मन विभा ने भी उनका ही साथ दिया और अभीक को यह असह्य है। रह रह कर एक कल्पना उसके मन मन्दिर में घूम रही है कि एक ऐसा भी दिन आयेगा जब वह योरुप जावेगा और वहां उसके चित्रों की तथा उसकी प्रशंसा होगी और जब विभा सुनेगी तब वह उससे विवाह करने को राजी हो जायगी।

रविवार का प्रभात अपनी अरुणाई लिये हुए आया : ब्रह्म मन्दिर में उपासना करने के बाद विभा लौटी तो अपने कमरे में उसने अभीक को बैठा पाया। पास में रद्दी की टोकरी में पड़े पुस्तकों के पैकिंग पेपर पर अभीक अपनी चित्रकला की साधना में लगा हुआ है।

विभा ने पूछा—"अभीक! अचानक आज तुम यहां कैसे आये।"

अभीक ने उत्तर देते हुए कहा—"यदि मैं यहां आने का तुम्हें ठीक कारण बतलाऊँगा तो तुम उसे सच नहीं मानोगी, लेकिन विभा! तुम यह विचार कभी मत करना कि अभीक तुम्हारे कमरे में चोरी करने आया है।"

पास ही में रखी हुई कुर्सी पर बैठती हुई विभा बोली—"यदि आवश्यकता हो तो तुम चोरी भी कर सकते हो। मैं पुलिस नहीं बुलाऊँगी।

अभीक ने कहा—"विभा! मुझे किसी न किसी वस्तु की आवश्यकता तो हमेशा बनी ही रहती है। अनेक क्षेत्रों में पराया धन हरण करना पुण्य कर्म समझा जाता है, किन्तु मैं यह नहीं करता, क्योंकि मेरे इस कार्य से पवित्र नास्तिक धर्मावलम्बियों के सीने में चोट आ सकती है। और हम लोग धार्मिक लोगों की अपेक्षा, विशेषतया अपने अनास्तिक देव के सम्मान की रक्षा करने के लिये, अपने कदम बड़ी सावधानी से से रखते हैं।"

"आप बहुत देर से बैठे हैं!"

उत्तर देते हुए अभीक बोला "हाँ! मुझे यहाँ बैठे बैठे पर्याप्त समय हो गया। बैठा बैठा मनोविज्ञान की एक समस्या को सुलझा रहा था कि 'तुमने काफी शिक्षा प्राप्त की है और देखने से यह भी प्रतीत होता है कि तुममें बुद्धि भी है, फिर भी मेरी समझ में यह नहीं आता कि तुम भगवान पर कैसे विश्वास कर लेती हो।' मैं अभी तक बैठा बैठा यही विचार रहा था किन्तु परिणाम कोई न निकाल पाया। शायद बार बार तुम्हारे घर आकर मैं इस खोज को पूरा करलूँ।"

"तुम फिर मेरे धर्म के पीछे पड़े!" विभा ने कहा।

'केवल इसलिये कि तुम्हारा धर्म मेरे पीछे पड़ा हुआ है। उसने हम दोनों के मध्य विचार भिन्नता की एक बहुत ऊँची दीवाल खड़ी करदी है। मैं उसको सहन नहीं कर सकता, उसके काँटे मेरे हृदय में हर दम चुभा करते हैं। मैं उस धर्म को, जो कि मेरे और तुम्हारे बीच में इतनी कटुता उत्पन्न करदे, कभी सहन नहीं कर सकता। तुम मुझसे विवाह नहीं कर सकतीं क्योंकि जिस पर विश्वास करती हो, उस पर मैं नहीं कर सकता

क्योंकि मुझमें चीजों को ग्रहण करने की बुद्धि है। भले ही तुम किसी भी देव पर अपने तन मन धन से विश्वास करती रहो मुझे तुम्हारे साथ विवाह करने में कोई हानि नहीं होगी। तुम्हारे अन्दर अभी वह बल एवं उत्साह नहीं कि तुम अनीश्वर वादियों को समाप्त कर दो। समस्त देवताओं की अपेक्षा मेरा विश्वास तुम पर अधिक है; मैं इस जीवन में सारे देवताओं को विस्मरण कर सकता हूँ, किन्तु विभा! यह नहीं हो सकता कि तुम मेरे हृदय से निकल जाओ।"

विभा ने अभीक की बातों का कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ समय बाद अभीक कह उठा "क्या तुम्हारे भगवान भी मेरे पिता जिन्होंने अपने पुत्र की नास्तिकता पर उसे अपने घर से अलग कर दिया, की ही भाँति कठोर हैं।

"ओह! तुम कह क्या रहे हो?" विभा ने बैठी आवाज़ से कहा।

अभीक जानना चाहता है कि विवाह न करने का मुख्य कारण क्या है। विभा के मुख से बात कहलवाना चाहता है, किन्तु वह चुप रहती है। बालकपन से ही विभा अपने पिता की लाड़ली लड़की रही है। अपने पिता के अतिरिक्त अपने जीवन में हृदय से इतनी भक्ति तथा प्रेम वह अन्य किसी को समर्पण नहीं कर पाई। वह अपने पिता पर इतनी श्रद्धा करती थी कि कभी कभी उसकी माँ के हृदय में भी ईर्ष्या के काले बादल घुमड़ने लगते थे। उसके पिता सतीश भी उसको हृदय से प्यार करते थे। जो कुछ भी वह माँगती उसी समय उसे लाकर देते। विभा के बंगले में एक छोटा सा तालाब था, उसी में उसने हिम के समान श्वेत बतखें, जिन्हें देखकर उसकी माँ सदा चिढ़ चिढ़ाया करती थी, पाली थीं। उसकी माँ कहती 'विभा इन्हें निकाल दे यह रात दिन खिट खिट करती रहती हैं।' एक बार विभा ने नीले रंग की एक साड़ी और एक जाकेट बनवाई थी, जिन्हें देखकर उसकी माँ ने कहा 'यह विभा को बिल्कुल नहीं फबती।' विभा को अपने मामा की लड़की से बहुत प्रेम था और वह उसे बहुत चाहती थी। जब उसके विवाह का समय आया और विभा ने हठ की कि उसको भी वहाँ भेज दिया

जाय तब उसकी माँ ने उसके नन्हे से हृदय को कुचलते हुए कहा था 'नहीं मैं तुझे वहाँ नहीं भेजूंगी। वहाँ बड़े जोर का जूड़ी बुखार चल रहा है, गई और बीमार हुई।'

उसने अनुभव किया कि उसकी माँ उसकी प्रत्येक आशा को कुचल देती है तो स्वतः ही उसकी श्रद्धा अपने पिता की ओर बढ़ती ही चली गई और यह तो बालकों की स्वाभाविक मनोवृत्ति होती है।

दैवयोग से पिता से पहले उसकी माँ का स्वर्गवास हो गया। जब उसके लिये इस संसार में केवल पिता का ही एकमात्र अवलम्बन रह गया। जैसे निर्धन व्यक्ति देवता की पूजा किया करता है, उसी भाँति अपने पिता की सेवा विभा करने लगी। पिता की सम्पूर्ण इच्छाओं को उसने अपनी इच्छाएं बनालीं। जिस कार्य से पिता असन्तुष्ट होते वह उसे कदापि नहीं करती। सतीश जब इस संसार से अपनी प्राण प्रिय लड़की विभा को छोड़ चल बसे तब उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति विभा के ही नाम करदी; किन्तु उन्होंने साथ ही साथ कुछ लोगों को ट्रस्टी अवश्य बना दिया था, क्योंकि विभा को वह अभी बालक ही समझते थे। प्रत्येक माह के आरम्भ में उसे अपने व्यय के लिये नियत धन मिल जाता था। पिता का सम्पूर्ण धन विभा के भावी पति के ही लिये था। वह यह जानती थी कि पिताजी के समान और कौन सा व्यक्ति आदर्श रूप था, जिससे वह अपना विवाह करे। एक दिन अभीक ने इस विषय में बात छेड़ते हुए कहा था "तुम जिसको विवाह के लिये कष्ट नहीं देना चाहतीं वह व्यक्ति यहाँ पर नहीं है तथा जिसको तुम कष्ट दे रही हो वह अभीक के रूप में तुम्हारे सम्मुख जीवित बैठा है। हवा में छुरी चलाने से तुम्हारे हृदय में दुख होता है, किन्तु इस हाड़ मांस की छाती में नुकीला छुरा भोंकने में तुम्हारे हृदय को दया भी नहीं आती! "विभा का कोमल हृदय अभीक के कठोर वचनों को सहन नहीं कर सका। वह उन वचनों को सुन, रोती हुई उठकर चली गई। अभीक यह भली

भाँति जानता था कि वह विभा से भगवान के आस्तित्ववाद पर तो तर्क कर सकता है किन्तु विभा का कोमल हृदय अपने स्वर्गवासी पूज्य पिताजी के विषय में एक भी अनादर एवं अश्रद्धा का शब्द सुनना सहन नहीं कर सकता है।

सुबह लगभग दस बजे होंगे कि विभा की भतीजी सुस्मि ने आकर कहा "बुआजी क्या आज सोती ही रहोगी? उठो देखो कि सूरज कितना चढ़ आया है।"

विभा ने कमर से तालियों का गुच्छा निकाल कर उसे देते हुए कहा "जा तू कोठे में से सामान निकाल। मैं अभी आई।"

बेकार मनुष्यों के कार्य की कोई सीमा नहीं होती इसलिये वे कोई न कोई आवश्यक कार्य करते ही रहते हैं। विभा की गृहस्थी भी वैसी ही है। घर गृहस्थी की जिम्मेदारी घर के खास आदमियों पर न होकर बाहर के अन्य व्यक्तियों पर ही है। विभा को अपनी बड़ी गृहस्थी का काम स्वयं करने का अभ्यास हो गया है क्योंकि वह यह जानती है कि यदि किसी नौकर ने कोई काम करने से इन्कार कर दिया तो उसके आत्म सम्मान को बहुत ठेस पहुँचेगी।

अभीक ने विभा के इन शब्दों को सुनकर कहा "यदि इस समय तुम यहाँ से जाओगी तो तुम सुस्मि के ही प्रति नहीं तो मेरे भी प्रति अन्याय करोगी। प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि उसके कार्यों में विक्षेप न डाला जाय। तुम सुस्मि को स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अवसर क्यों नहीं देती? यदि तुम नहीं चाहती तो कम से कम आज तो उसे स्वतंत्र राज्यों की भांति अपने काम करने का अवसर दो। अतिरिक्त इसके मैं तुम्हारी परीक्षा लेना चाहता हूँ। आज तक मैंने तुमसे किसी भी कार्य के लिये नहीं कहा, किन्तु आज कुछ कहना चाहता हूँ। इससे मुझे एक नया ही अनुभव होगा"

विभा उत्तर देते हुए बोली "अवश्य होने दीजिये। कुछ बाकी क्यों रखा जाय।"

अभीक ने अपने पैंट की जेब से चमड़े का बहुत ही सुन्दर एक बेग निकाल कर विभा को दिखलाया। यदि पूछा जाय तो वह थी उनके हाथ की घड़ी। वह प्लेटिनम की थी और उसमें हीरों के बहुमूल्य टुकड़े लगे हुए थे। वह बोला "मैं इसको बेचना चाहता हूँ।"

आश्चर्य से विभा बोली "इसे बेचेंगे!"

हाँ इसे बेचूँगा। तुम्हें आश्चर्य क्यों हुआ?

क्षण भर चुप रहकर विभा बोली "यह घड़ी तो मीनाक्षी ने तुम्हारे जन्म दिवस के उपलक्ष में तुमको भेंट की थी। मुझे तो ऐसा भास हो रहा है कि इस घड़ी में लगी मशीन धुक धुक नहीं कर रही वरन् धड़क रहा है मीनाक्षी का व्यथित हृदय। जानते हो, उसने कितना दुख पाया, कितनी व्यथा सही और अपने उपहार को तुम्हारे योग्य बनाने के लिये उसने कितना बड़ा दुस्साहस किया!"

उत्तर देते हुए अभीक बोला "यह घड़ी तो उसने अवश्य दी है किन्तु अन्तिम समय तक यह नहीं बतलाया कि यह है किसकी। मैं मूर्ति पूजक नहीं जो इसको स्मृति स्वरूप अपनी छाती पर रख रात दिन इसकी पूजा किया करूँ। मैं यह नहीं चाहता कि मैं इसका उपयोग करूँ।"

"तुम्हारी बातों ने मुझे आश्चर्य में डाल दिया है अभीक! अभी दो तीन माह हुए बेचारी मोतीझला में........."

अपना मुँह फेरते हुए अभीक ने कहा "यह तो अतीत के स्वप्न हैं जो समय के ही साथ टूट गये। अब उन सुख दुखों का स्मरण करना व्यर्थ है।"

तुरन्त ही विभा बोली "इस बेचारी ना समझ ने तो अन्तिम समय तक, जब तक कि उसके हृदय में दो धड़कनें भी शेष थीं, पूर्ण रूप से विश्वास किया था कि तुम उसे प्यार करते हो।"

"उसने मुझ पर गलत विश्वास नहीं किया था।"

विभा ने पूछा तो फिर क्या बात है ! "

अब रुद्धकण्ठ से अभीक ने कहा "यद्यपि आज मीनाक्षी इस संसार में नहीं है किन्तु उसका दिया हुआ उपहार मुझे उसी प्रकार फल दे रहा है जिस प्रकार कि एक छोटा सा पौधा बड़ा होकर फल देता है। विभा ! बतलाओ मेरे लिये इससे अधिक और क्या हो सकता है ?"

सहसा, विभा के सुन्दर मुख पर पीड़ा की एक काली बदली छा गई। कुछ देर चुप रहकर उसने कहा "इतना बड़ा कलकत्ता शहर पड़ा हुआ है किन्तु यह घड़ी बेचने तुम मेरे ही पास क्यों आये ?"

अभीक ने उत्तर दिया "क्योंकि मुझे मालूम था कि तुम मोल भाव नहीं करोगी।"

"इसका अर्थ है कि कलकत्ते के इतने बड़े बाजार में ठगने के लिये तुम्हें मैं ही मिली हूँ।"

"इसका अर्थ यह नहीं है, किन्तु प्रेम तो स्वयं अपनी राजी से कहीं न कहीं ठगा अवश्य जाता है।"

ऐसे व्यक्ति पर क्रोध आना बड़ा कठिन है। उस पर क्रोधाग्नि लाना अपना लड़कपन दिखलाना है। वह यह जानता ही नहीं कि लज्जा किस बात में करनी चाहिये। उसके दिल में जो आता है बस वही कह देता है। यही उसका अकृतिम ज्ञान है, जो अपनी सरलता से नारी हृदय को अपनी ओर बरबस खींच लेता है। इस बात में डाँटने फटकारने का किसी को अवसर ही नहीं मिलता। जो व्यक्ति जीवन में अपने कर्तव्य का ठीक पालन करते हुए आगे बढ़ते हैं, स्त्रियों के हृदय में उनका सम्मान बढ़ जाता है। जिस मनुष्य को न्याय तथा अन्याय का बोध ही नहीं होता उन्हीं के कठोर हाथों में बेचारी गरीब स्त्रियों का आँचल दे दिया जाता है।

अपनी मेज पर पड़े हुए ब्लाटिंग पेपर को अपनी नीली पेन्सिल से काटते हुए बिभा ने कहा " यदि मेरे पास रुपये हुए तो मैं तुम्हें यों ही दे दूँगी । परन्तु मैं इस बेचारी मीनाक्षी की तुम्हें भेंट की हुई घड़ी को कभी नहीं लूँगी ।"

अभीक ने उत्तेजना पूर्ण स्वर में कहा "भीख ! यदि मैं तुम्हारी ही भाँति धनी होता तो तुम्हारे दान को उपहार स्वरूप ले लेता तथा उसके बदले में उसी मूल्य के बराबर तुम्हें भी उपहार देता । अच्छा बीती बातों को जाने दो; मैं ही पुरुष का कर्तव्य पूरा किये देता हूँ । तुम यह घड़ी ले लो मैं तुमसे इसके बदले में एक भी पैसा नहीं लूँगा ।"

सरल कण्ठ से बिभा ने उत्तर दिया "स्त्रियों का तो कर्तव्य है पुरुषों द्वारा दी गई वस्तुओं को ले लेना । इसमें लज्जा की कोई बात नहीं ; किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मैं इस घड़ी को ले लूँ । अच्छा ! मुझे यह बतलाओ कि तुम इस घड़ी को क्यों बेच रहे हो ? "

अभीक बोला "यदि सुनना ही चाहती हो तो सुनो । मेरे पास एक टूटी फूटी फोर्ड गाड़ी है । उसकी दशा अब बहुत जर्जर हो चुकी है । यह तो केवल मैं ही हूँ जो उसके पुर्जों को टीक टाक कर चला रहा हूँ ! यदि आठ सौ रुपये मुझे मिल जाँय तो मुझे आशा है कि एक वैसी ही "क्राइ-स्टेलर' गाड़ी मुझे मिल जाय और मैं, अपनी कारीगरी से, उसे नई बना लूँगा ।"

"क्या करोगे क्राइस्टेलर गाड़ी का ?" बिभा ने पूछा ।

अभीक बोला "मुझे कहीं विवाह करने तो जाना नहीं है ।"

"मुझे यह आशा नहीं कि तुम ऐसा उत्तम कार्य करोगे ।"

"ताड़ा खूब तुमने ! तो पहिले तुम से ही पूछता हूँ कि तुमने शीला को देखा है । वही कुलदाचरण मिश्र की लड़की ?"

"हां ! तुम्हारे ही साथ इधर उधर घूमते देखा है।"

अभीक ने कहा "हाँ। उसने मेरे हृदय में स्थान कर लिया है अन्य पुरुष की ओर निगाह भी नहीं उठाती। वह आजकल के विचारों की प्रगतिशील युवती है। उसके साथ मेरे विवाह को देख शिष्ट समाज दाँतों तले उंगली दबाये, उसे इसी में आनन्द आता है।"

अप्रसन्न हो विभा ने कहा "इतना आनन्द क्या थोड़ा है, उसे तो पूर्ण प्रसन्नता तब होगी जबकि युवती समाज की छाती में वह कांटा बनकर चुभ जायगी।"

"यह बात तो मुझे भी ज्ञात थी किन्तु मैं तुम्हारे मुख से कहलवाना चाहता था। शायद मेरे मुख से यह इतनी अच्छी नहीं लगती जितनी कि तुम्हारे मुख से लग रही है। अच्छा ! सच सच बतलाना ; क्या उसका सौन्दर्य अन्य लड़कियों से कहीं अधिक अच्छा नहीं ? अन्य स्त्रियों के प्रति वह विधाता का अन्याय कहा जा सकता है।

"केवल सुन्दर स्त्रियों के ही विषय में विधाता को मानते हो ?"

"जब निन्दा करने की आवश्यकता आ पड़ती है तब जैसे भी हो एक विपक्षी बनना ही पड़ता है। जब कवि रामप्रसाद के ऊपर विपत्तियों का पहाड़ आ टूटा तब उन्होंने अपनी माँ को सामने रखकर गाया 'भविष्य में तुझे न कहूँगा माँ अपनी।' जो फल आज तक पुकारने पर न मिला वही फल मुझे बिना पुकारे ही मिल गया। केवल लाभ हुआ तो इतना कि भक्त ने भगवान की निन्दा करना कम कर दिया इसीलिये तो मैंने भी निन्दा करते समय ईश्वर का नाम ले ही लिया है।'

विभा ने पूछा "निन्दा किस बात की ?"

अभीक ने उत्तर दिया "बतलाता हूँ। एक दिन मैं शीला को अपनी टूटी गाड़ी में बिठलाकर, पीछे से जाने वाले राहगीरों की नाकों में मोटर

का धुँआ छोड़ता हुआ फुटबाल के मैदान की ओर जा रहा था। इतने में ही क्या देखा कि सामने से श्रीमती पकड़ासी चली आ रही थीं। उनका कद हाथी की भाँति लम्बा था। अपनी प्राइट कार में वह बैठी हुई थीं। हाथ उठाकर उन्होंने मेरी गाड़ी रुक वाली और बातें करते करते वह मेरी टूटी गाड़ी की ओर देखने लगीं। विभा! यदि तुम्हारे भगवान आधुनिक साम्यवाद के विचारक होते तो स्त्रियों को कभी भी इतना सौन्दर्य नहीं प्रदान करते जो राह चलते लोगों के दिलों में आग लगाती।"

विभा ने कहा "इसीलिये शायद तुम ...?"

'हाँ! इसीलिये मैं चाहता हूँ कि जितनी भी शीघ्र हो सके मैं शीला को 'क्राइस्टेलर' कार में बैठा कर श्रीमती पकड़ासी के सामने से हार्न बजाता हुआ ले जाऊँ। अच्छा! एक बात पूछता हूँ सच बतलाना। क्या तुम्हारे हृदय में तनिक भी ...?"

"मुझे क्यों बेकार घसीटते हो? भगवान ने मुझे इतनी रूपवती बनाया ही नहीं है कि अन्य लड़कियों की सुन्दरता पर कभी अन्याय किया हो। मेरी मोटर भी इतनी सुन्दर नहीं है कि तुम्हारी मोटर को लजा सके।"

तुरन्त ही कुर्सी से उठ, विभा के पैरों के पास बैठ अभीक उसका हाथ पकड़ कर कहने लगा "विभा! कहाँ राजा भोज और कहाँ काँगड़ा तेली। किससे किसकी तुलना कर रही हो। तुम आश्चर्यमयी हो। हाँ! विभा तुम मेरे लिये आनन्द स्वरूप हो, समझीं! विभा! मैं तुम्हें देखता हूँ और मुझको यह भी डर लगता है कि कहीं एक दिन मैं तुम्हारे भगवान को न मान बैठूं। मैं तुम्हारे हृदय में किसी प्रकार की ईर्षा नहीं जगा सका। विभा! तुमने मुझे अपने ईश्वर के सम्बन्ध में कभी भी नहीं जानने दिया कि आखिर वह है क्या? यद्यपि तुम जान सकती हो कि......"

"बस चुप रहो। मैं कुछ नहीं जानती बस केवल यही जानती हूँ कि तुम विचित्र हो और विश्वरचयिता के लिये केवल हास्य मात्र हो।

अभीक ने कहा 'तुम अपने मुख से मुझे कभी भी साफ साफ नहीं बतलाओगी, किन्तु मैं सब कुछ समझ रहा हूँ कि तुम शीला के प्रति मेरे विचार जानना चाहती हो। उसको प्रकट न करने का मुझे उसी भाँति घोर अभ्यास हो गया है जिस प्रकार कि बचपन में मुझे सिगरेट पीने का शौक हो गया था। सिगरेट लगती तो कड़ुवी थी किन्तु जब मैं उसे मुँह में लगाकर लच्छेदार धुँआ छोड़ता हुआ बाजार में चलता था तब मुझे उस पर गर्व होता था। वह इस बात को भली भाँति जानती है कि किस प्रकार नशे की मात्रा धीरे २ करके बढ़ाई जाती है। स्त्रियों के प्रेम में जो मदुभरी रङ्गीन मदिरा है वही मेरे हृदय में भाँति २ की प्रेरणा भर देती है। मैं कलाकार हूँ और उस प्रेम से उत्पन्न प्रेरणा ही मेरी कला का प्राण है। यदि मुझ । उस प्रेम की प्रेरणा न मिले तो मेरी कला उसी प्रकार आगे नहीं बढ़ सकेगी जिस प्रकार कि रेत में नाव नहीं चल सकती है। यह मै भली भाँति जानता हूँ कि शीला मेरे पास बैठने में घबड़ाती है। उसके हृदय में लाल रङ्ग के सिगनल की भाँति, जो कि आगे के किसी भय की सूचना देता है, भय की अग्नि धधकती रहती है। विभा! इससे तुम मेरा अपराध मत समझना। शायद तुम यह सोचती हो कि मेरी यह भावना विलासितापूर्ण है, और उन रंगीन तितलियों का मैं रसपान करना चाहता हूँ! किन्तु नहीं! यह तुम्हारे भोले हृदय का भ्रम है। स्त्रियों का यह साथ मेरे लिये आवश्यक है क्योंकि इससे मेरी कला आगे बढ़ती है।"

"अब मेरी समझ में आया कि तुम इसीलिये 'क्राइस्टेलर' गाड़ी खरीदना चाहते हो।"

इस बात को स्वीकार करते हुए अभीक ने कहा "जब शीला में कोई गर्व जाग उठता है तब उसकी सुन्दरता उसके मुख पर छलक उठती है। केवल सुन्दरता के ही बढ़ाने के लिये स्त्रियों के वास्ते इतने सुन्दर कपड़े तथा गहने

बनाए गये हैं। हम लोग चाहते हैं कि स्त्रियों में सुन्दरता हो और वह चाहती हैं कि पुरुष नामी एवं ऐश्वर्यवान हो। उसकी सुनहली रंगीन कीर्ति में उनकी सुन्दरता छिपी हुई है। यही तो प्रकृति का विचित्र रहस्य है, जो कि पुरुषों को ऐश्वर्यवान बनाता है। बतलाओ विभा! यह ठीक है या नहीं?"

विभा ने उत्तर दिया 'सम्भव है यह सत्य हो; किन्तु मैं तो यह जानना चाहती हूँ कि ऐश्वर्य क्या है? जो यह समझती हैं कि 'क्राइस्टेलर' की गाड़ी में ही बैठने में उनका ऐश्वर्य है, वे पुरुषों को ऊँचा न उठा कर नीचे ही गिराती हैं।"

अभीक ने उत्तेजित होकर कहा 'मुझे सब मालूम है। यदि मेरे और तुम्हारे बीच तुम्हारे भगवान न आ खड़े होते तो जिसे तुम ऐश्वर्य कहती हो, उसके ही सर्वोच्च शिखर पर तुम मुझे पहुंचा सकतीं थीं।"

अभीक के हाथ से अपना हाथ छुड़ाते हुए विभा बोली "इस एक ही बात को तुम बार बार मत कहो। मैं तो तुम से बराबर उल्टा ही सुनती आई हूँ। कलाकार का विवाह करना उसका गला घोंटना है। क्योंकि जब तक वह अपना विवाह नहीं करेगा तब तक उसको अन्यान्य युवतियों से प्रेम करने की आवश्यकता बनी रहेगी और वह अपनी कला में प्रेरणा करने के लिये नवीन प्रेम चाहेगा; किन्तु विवाह करते ही उसकी प्रेरणा का गला स्वयं अपने आप घुट जायेगा। यदि मैं तुम्हारे साथ शादी कर तुम्हें उच्च कलाकार बना सकती, तुम्हारी प्रेरणा को बढ़ा सकती तो अवश्य ही तुम से विवाह कर लेती।"

अपने हृदय को झकझोरते हुए अभीक ने कहा "तुमने मेरी प्रेरणा को क्यों नहीं बढ़ाया? मुझे दुख तो यही है कि तुम आज तक मेरे ऐश्वर्य को नहीं पहिचान सकीं। यदि तुम चाहतीं तो धर्म कर्म की कच्ची दीवाल

को पक्षपात से तोड़ मेरे साथ मेरी जीवन संगिनी बनकर आ खड़ी होतीं और किसी बाधा को मानती भी नहीं। सरिता में बहती हुई नाव जब किनारे पर लगती भी हो तब भी यात्रियों को विश्वास नहीं होता कि किनारा पास है। मेरे जीवन की मधुकरी! अपनी आभा लिये वह कौन सा भाग्यशाली दिवस आवेगा जब तुम मेरी होकर रहोगी।"

विभा ने कहा "तब-जब कि तुम अपने जीवन में मेरी कोई आवश्यकता नहीं समझोगे।"

"यह सब बातें निराधार हैं इनमें सत्यता कम और आडम्बर अधिक है। क्या तुम जो सोचती हो, कि मेरा जीवन तुम्हारे बिना नहीं चल सकता है, मुझसे छिपा सकती हो ?"

"यदि मैं इसे कहूँ भी तो उससे क्या लाभ और छिपाऊँ तो इसके छिपाने में रखा क्या ? मेरे मन में चाहे जो हो, किन्तु मैं अपने हृदय का कंगलापन नहीं दिखलाना चाहती।"

"मैं अपने आपको गरीब कहना चाहता हूँ और दिन रात यही कहता रहूँगा कि मैं इस संसार में केवल तुम्ही को चाहता हूँ।"

"और साथ साथ यह भी कहोगे कि तुम 'क्राइस्टेलर' गाड़ी भी चाहते हो ?"

"यही तो ईर्ष्या है। अपने हृदय में इसी ईर्ष्या को स्थाई रहने दो तथा उसमें प्रेम की छिपी हुई आग को प्रमाणित होने दो। तुम्हारा हृदय जलता हुआ दीपक नहीं वरन् एक ताजा पुष्प है।" यह कहता हुआ अभीक उठ खड़ा हुआ और चिल्ला कर बोला "हुर्रे"

"अभीक ! यह क्या लड़कपन है ? क्या इसीलिये सबेरे २ यह विवाह की योजना बना रहे थे ?"

"हाँ ! मैं इसीलिये यहाँ आया था । मैं तुम्हारी इस बात से सहमत हूँ । मैं ऐसे मनुष्यों को भी जानता हूँ जिनको यह घड़ी कम कीमत पर बेच सकता हूँ । किन्तु तुम्हारे पास मैं घड़ी बेचने नहीं आया, तुम्हारे हृदय के उत्साह को तोड़कर तुम्हें दुख देने भी नहीं आया ; किन्तु मुझ अभागे के भाग्य में न तुम हो और न लीला ।"

"यह तुमने कैसे समझ लिया ? भाग्य तो इमी के खेल की भाँति खुले ताशों से खेल नहीं खेलता । मगर देखो आज मैं तुमसे एक बात कहे देता हूँ । तुम पूछते हो ना कि तुम्हारी लीला देखकर मेरे हृदय में काँटा चुभता है या नहीं ? तो आज मैं सत्य २ कह रही हूँ कि तुम्हारी यह लीला देखकर मेरे हृदय में काँटा चुभता ही चुभता है ।"

तेज होकर अभीक कह उठा "विभा ! यह समाचार तो बहुत सुन्दर है ।"

विभा बोली "इतने प्रसन्न मत हो ओ अभीक ! यह ईर्ष्या नहीं अपमान है । युवतियों के साथ इतनी मित्रता, इतना घुलना मिलना, इतनी असभ्य निस्संकोचिता, स्त्री जाति के हृदय में तुम्हारे प्रति घृणा उत्पन्न करती है । तुम्हारी यह प्रणाली मुझे अच्छी नहीं लगती ।"

"यह तुमने क्या कहा ? क्या इस संसार में किसी पर श्रद्धा नहीं की जा सकती ? स्त्री जाति में मुझे जो भी सुन्दर दिखलाई देगी उस पर ही मैं श्रद्धा करूँगा । फिर स्त्री चाहे जैसे गुण की क्यों न हो । व्यवसाय में इसी को बाहर से मंगाकर चीजों पर कीमत बढ़ाना कहते हैं ।"

"व्यर्थ का तर्क मत करो ।"

"तुम तो तर्क कर सकती हो और मैं नहीं कर सकता । किसी ने ठीक ही कहा है 'आया है समय निकट तर । नारी करेंगी बातें । ऐसे पुरुष निरुत्तर ।"

"अभीक, तुम तो बात काटने की चेष्टा में हो। मेरे कहने का तात्पर्य था कि पुरुषों को स्त्रियों से अधिक सम्पर्क नहीं बढ़ाना चाहिये। ऐसा करने में ही उनका सम्मान है।"

"विभा! स्त्रियों से स्वाभाविकतया दूर रहना चाहिये या अस्वाभाविकतया? सुनो हम लोग आधुनिक युग के व्यक्ति हैं अतः नकली भद्रता को न मान कर असल स्वभाव को मानते हैं। शीला को बगल में बैठा कर मोटर चलाता हूँ, वहाँ मेरी स्वाभाविकता तो रहती ही है, किन्तु नेकनामी के कारण हमारी सीटों में एक डेढ़ हाथ का अन्तर भी होता है तो क्या उससे स्वभाव की अभद्रता कही जायगी!"

"अभीक! तुम मनुष्यों ने स्त्रियों को समाज में विशेष स्थान देकर उच्चता के शिखर पर चढ़ाया था, तुम लोग कितने भी कठोर हो किंतु तुम लोगों ने समाज में उनका मूल्य नहीं घटाया। यदि आज उस चढ़े हुए मूल्य को वापिस ले लोगे, तो अपना अप्रसन्नता का मूल्य घटा दोगे। मैं व्यर्थ ही झकझक कर रही हूँ आज कल तो समय ही बुरा है।"

अभीक ने कहा "मैं इस युग को घटिया नहीं कह सकता बल्कि कहूँगा कि युग ही बेहायापन लिये हुए है। प्राचीन युग के लोग न जाने किस नशे में आंखें बन्द किये बैठे हैं और इस युग के नन्दी भृङ्गी हाथ में शीशा लेकर अपने चेहरे की आलोचना कर रहे हैं। इस काल में जन्म लिया है तो महादेव की भाँति भाँग छान कर, आंखें लाल २ कर, बेकार नहीं बैठ सकता, किन्तु यदि नन्दी भृङ्गी की भाँति टेढ़ी मेढ़ी सूरत बनाकर बैठ जाऊँ तो संसार में मेरा नाम हो सकता है।"

विभा बोली "अच्छा अच्छा!! जाओ, टेढ़ा सीधा मुँह बनाकर अपना नाम करो। दशों दिशाओं में अपना मुँह बना कर घूमो। किन्तु यहाँ से जाने से पहिले एक बात सच सच बतलाते जाओ, कि संसार भर की लड़कियाँ तुम्हारी सुन्दरता को लेकर तुम्हारा सहयोग पाती हैं क्या इससे

तुम्हारे 'अच्छे लगने' वाले हृदय पर चोट नहीं पहुंचती ? क्या हर बात में उत्साह को, जिसे तुम उत्साह कहते हो, अनेक लड़कियाँ अपने पैरों से नहीं कुचल देतीं !"

"विभा ! सुनो ! जिसे तुम उमङ्ग, कह रही हो वह हम लोगों की सम्पत्ति है तथा वह बहुमूल्य वस्तु है। हर कोई उसको नहीं प्राप्त कर सकता, यह चीज़ उसकी सामर्थ्य से बाहर है ; किन्तु जिसे तुम भीड़ भाड़ में खींचातानी कह रही हो वह कबाड़ी की दूकान में का टूटा फूटा सामान है। विभा ! बाज़ार में जहाँ पर अच्छा माल बिकता है, वहीं पर इस टूटे फूटे माल का भी कोई न कोई ग्राहक मिल ही जाता है। और जो वस्तुऐं बहुत सुन्दर होती हैं उन्हें तो कुछ धनी व्यक्तियों के अतिरिक्त अन्य कोई खरीद भी नहीं पाता।"

"अभीक ! इस वस्तु का मूल्य, चाहे वह कितना ही अधिक क्यों न हो, तुम अवश्य दे सकते हो। किन्तु तुम्हारा स्वभाव विचित्र है। फटी टूटी वस्तुओं पर कलाकारों को विशेष आकर्षण होता है, क्यों कि उसमें एक कौतूहल छिपा रहता है। संसार की प्रत्येक वस्तु चित्र स्वरूप नहीं होती। खैर जाने दो। व्यर्थ तर्क से क्या लाभ। फिलहाल तो 'क्राइस्टेलर' कार को खरीदने की जहाँ तक हो सके, योजना बनाई जाय।"

इतना कह विभा वहाँ से उठकर बगल वाले कमरे में चली गई और वापिस आ अभीक के हाथों में नोटों का एक बण्डल देती हुई बोली "यह नोटों का बण्डल कला के क्षेत्र में तुम्हारी प्रेरणा बढ़ाने के लिये है और इस पर सरकारी छाप भी मौजूद है। किन्तु उन नोटों के बदले तुम मुझे अपनी घड़ी देने का आग्रह न करना।"

अभीक कुर्सी का सहारा ले जमीन पर बैठ गया। विभा ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और बोली "मुझे गलत मत समझो अभीक ! यह नोट तुम्हारे पास नहीं हैं, मेरे ही पास हैं.....। इस अवसर को लाभ....."

विभा की बात बीच में काटते हुए अभीक बोला "यह नोट मेरे पास नहीं हैं, मैं तो अभावग्रस्त हूँ। इस अवसर को पूरा करना तुम्हारे हाथ में है। मैं इन रुपयों का क्या करूँगा ?"

अभीक के हाथों पर प्रेम से अपने हाथ फेरते हुए विभा ने कहा "जो काम मैं नहीं कर सकती उसका दुख मेरे हृदय में हमेशा ही बना रहेगा, किन्तु जो कुछ भी मैं तुम्हारे लिये कर सकती हूँ, उस सुख से मुझे अलग मत करो।"

"नहीं ! नहीं ! कदापि नहीं !! क्या तुम से आर्थिक सहायता प्राप्त कर शीला को मोटर में घुमाना मेरे लिये सम्भव है ? मुझे तो यह आशा थी कि यह बात सुनकर तुम मुझ पर क्रोधित हो उठोगी।"

"अभीक ! मैं क्यों क्रोधित होऊँ ? मैं जानती हूँ कि तुम्हारा अल्हड़पन थोड़ी ही देर का है। यह शीला के हित में भयग्रस्त है तुम्हारे में नहीं। तुम्हारे इस लड़कपन को मैंने आज ही देखा हो सो बात नहीं है, ऐसा तो मैं अनेकों बार देख चुकी हूँ और इस पर मन ही मन हँस भी लेती है। यह मैं भली भांति जानती हूँ कि इस प्रकार का कार्य किये बिना तुम्हारा मन लग ही नहीं सकता। हाँ ! और जब तुम उसे प्राप्त कर लोगे तब यह खेल और भी दृढ़ हो जायगा। यह हो सकता है कि तुम किसी को प्राप्त करना चाहते हो किन्तु मुझे यह नहीं ज्ञात होता कि तुम्हें भी कोई पाना चाहता है या नहीं। तुम स्वयं नहीं चाहते कि तुम्हें कोई पाये।"

"विभा ! तुम मुझे सबसे अधिक चाहती हो इसीलिये मेरी ओर से निश्चिन्त रहती हो। तुम्हें यह भली भांति मालूम है कि मुझे युवतियाँ अच्छी लगती हैं, किन्तु लड़कियों का इस प्रकार अच्छा लगना मुझ जैसे नास्तिक का ही कार्य है, मैं उनको पत्थरों के मन्दिर बनवाकर आस्तिकों के समान, मूर्तियों को बन्दी बनाकर अपने अधिकार में नहीं रखूँगा। युवतियों

के साथ २ लबादियाँ डाले बहुत से पुरुष मैंने देखे हैं और उस दृश्य को देख कर कभी २ मेरा हृदय घबड़ाने लगता है। मेरे जैसे कलाकार के लिये स्त्रियाँ उतनी ही पूज्या हैं जितनी किसी आस्तिक के लिये देवी । कलाकार उनके रूप को देख कर उनमें गोते नहीं खाता, किन्तु तैर कर झट वह पार लग जाता है। विभा ! तुम्हारे हृदय में किसी प्रकार का लोभ नहीं है, तुम्हारे हृदय का सबसे बड़ा दान है एक स्वतंत्र विचार धारा।"

विभा ने हंसते हुए कहा "तुम इस प्रकार की प्रार्थना को रहने दो। कलाकार अज्ञ बालक नहीं, तुम लोग हो तो व्यस्क किन्तु बातें बच्चों के सदृश्य करते रहते हो। अबकी बार जो खेल तुमने आरम्भ किया है उसे खेलने को मेरे ही हाथों से खिलौना लिया सही"

"नैव नैव च। अच्छा एक बात पूछता हूँ कि तुमने यह रुपया अपने ट्रस्टियों की मुट्ठी में से कैसे निकाल लिया ?"

"साफ २ बतला देने से तुम प्रसन्न नहीं होगे। तुम्हें मालूम है कि मैं अमर बाबू से मैथेमैटिक्स सीख रही हूँ।"

अभीक ने कहा "तुम सब विषयों में यहाँ तक कि शिक्षा में भी मुझसे आगे बढ़ जाना चाहती हो।"

"बको मत, सुनो पहिले, "विभा ने उसकी बात काटते हुए कहा ' मेरे ट्रस्टियों में से मेरे मामा आदित्य भी एक हैं। उन्होंने अपनी परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की है तथा सोने का एक मेडल प्राप्त किया है उनका विचार है कि यदि उन्हें पढ़ने की पूरी सुविधा मिले तो वे रामानुजाचार्य की श्रेणी में आ सकते हैं। एक समस्या की पूर्ति करके उसे उन्होंने आइन्सटाइन के पास भेजी थी, और उसके आये हुए उत्तर को मैंने पढ़ा था। ऐसे आदमी को सहायता देने के लिये आवश्यक है कि उसके सम्मान की पूर्ण रक्षा की जाय। इसलिये मैंने सोचा था कि उनको सहायता देने के बदले में उनसे गणित सीखूँगी। मेरे इस विचार से मामा बहुत प्रसन्न हुए इसलिये मेरे

ट्रस्टफ-ण्ड में से शिक्षा के लिये इतनी बड़ी यह रकम निकाल कर उन्होंने मेरे सामने रखदी है, उसी में से मैं उन्हें मासिक वेतन दिया करती हूँ।"

यह सुनते ही अभीक का चेहरा विचित्र तरह का होगया। हंसने की थोड़ी चेष्टा करते हुए उसने कहा "विभा ! ऐसे भी कलाकार हैं, जो उचित साधन न होने के कारण अपनी कला में उन्नति नहीं कर सकते और यदि उन्हें उचित सहायता प्राप्त हो जाय तो वे मिकेल अञ्जेलो की थोड़ी बहुत तो होड़ कर ही सकते हैं।"

"कलाकारों को यदि उचित सहायता न भी मिले तो भी वे उसकी होड़ कर सकते हैं। अब मुझे यह बतलाओ कि तुम यह धन लोगे कि नहीं ?"

"क्या तुम मुझे खिलौने के दाम दे रही हो ?"

"हाँ ! तुम लोगों को तुम्हारे बनाये गये खिलौनों का दाम देना ही हम लोगों का हमेशा से कर्तव्य रहा है। इसमें दोष ही क्या है ? उस खिलौने को प्राप्त कर फिर उसे घूरे पर ही फेंकना होगा।"

"काइस्टेलर की इच्छा तो आज ही समाप्त हो गई। प्रगतिशील समय भले ही मेरी टूटी फूटी फोर्ड मोटर को ही बनाकर चलाता रहे मुझे इसकी चिन्ता नहीं। अब मुझे यह सब बातें अच्छी नहीं लगतीं। मैंने सुना है कि अमर बाबू विलायत जाने के लिये रुपये इकट्ठे कर रहे हैं। वहाँ पर डिग्री मिलने पर यहाँ लौट कर वह शोर मचा देंगे कि वह साधारण व्यक्ति नहीं हैं।"

विभा ने कहा "मैं भी यही चाहती हूँ कि वह ऐसा ही करें उसमें उनका नहीं देश का सम्मान है।"

ऊँचे स्वर में अभीक बोला "तुम मुझसे आशा करो या न करो किन्तु मुझे भी यही प्रमाणित करना होगा। उनको तर्क के मार्ग से प्रमाण-पत्र मिल जायगा-किन्त कला का प्रमाण रुचि के द्वारा ही प्राप्त होता है तथा

रसिक व्यक्ति ही इस मार्ग को अपनाते हैं। यह सीधा और साफ ग्रान्डट्रन्क रोड नहीं, जिस पर जो भी चाहे वही आसानी से चल दे। यह देश छोड़ कर जहाँ पर लोग आँखों से पट्टी बाँध कर कोल्हू चलाते हैं, विदेश जाना मुझे अति आवश्यक है ताकि एक दिन तुम्हारे मामा को भी यह कहना पड़े कि मैं साधारण व्यक्ति नहीं और उनकी भानजी को भी यही स्वीकार करना पड़े कि······"

"भानजी की बात मत कहो। तुम मिकेल अञ्जेलो के समान ही नाप तौल के मनुष्य हो अथवा नहीं यह जानने के लिये उसे किसी की बाट नहीं देखनी पड़ी। उसके लिये तुम्हें किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं; तुम बिना प्रमाण के ही महान् हो। [illegible] बिलायत जाओगे ?"

"यह तो मेरा रात दिन का स्वप्न है।"

"तो मेरे इस दान को ले लो। तुम्हारी प्रतिभा के चरणों में यह मेरे कुछ पुष्प हैं।"

"अभी इस बात को यहीं रहने दो। कानों में स्वर ठीक नहीं लग रहे हैं। गणित अध्याय की महिमा सफल हो। न सही मेरे लिये यह युग दूसरा ही युग सही। गरीबी हमेशा उस स्वप्न के पूर्ण होने की राह देखती रहेगी। किन्तु एक दिन अपने तकिये में अपना मुँह छिपा कर तुमको कहना ही होगा 'यदि उनके नाम के साथ मेरा नाम भी हमेशा के लिये जोड़ दिया जाता तो उत्तम होता, लेकिन यह न हो सका'।"

'पास्टेरिटी' तब बाट जोहने की नौबत ही नहीं आयेगी। मुझे अभी से दण्ड मिलने लगा है।"

"मेरी समझ में नहीं आता कि तुम किस दण्ड की बात कह रही हो, किन्तु इतना कहे देता हूँ कि तुम्हारे लिये जो सबसे बड़ा दण्ड हो सकता है उसे तुमने समझा ही नहीं है और सच पूछो तो वह है मेरे चित्र।

नया युग आ रहा है, उस युग की वरण सभा में अनेक रथ सजेंगे किन्तु तुम्हें मेरे दर्शन कहीं भी नहीं होंगे।" यह कह अभीक द्वार की ओर बढ़ गया।

विभा ने पूछा "कहाँ जा रहे हो ?"

"मीटिङ्ग में।" अभीक ने उत्तर दिया।

"कैसी मीटिङ्ग ?"

"छुट्टियों में विद्यार्थियों के साथ मुझे दुर्गा पूजा करनी है।"

अभीक की नास्तिकता इतनी हिंसक क्यों हो उठी है—यह बात विभा से छिपी नहीं थी। यही कारण है कि वह उस पर क्रोधित नहीं हो सकती, वह बहुत सोचती है कि इसका परिणाम क्या होगा, किन्तु सोच नहीं पाती। उसके पास और भी जो कुछ है वह सब उसे (अभीक को) समर्पण कर सकती है, किन्तु पिता की इच्छा तथा उनकी मर्य्यादा ही एक मात्र उसके इस समर्पण न करने का कारण बना हुआ है। पिता की वह इच्छा उनके लिये कोई तर्क नहीं है और न तर्क का ही कोई विषय। किन्तु उनकी इच्छा के विपरीत कोई भी कार्य नहीं किया जा सकता। कितनी ही बार उसके पिता की इच्छा के विपरीत पग उठाने का विचार किया भी ; किन्तु उसका हृदय उसे ऐसा करने से मना कर देता।

नौकर ने आकर कहा "अमर बाबू आये हैं।" सुनते ही अभीक बड़ी तेजी से सीढ़ियों से उतर कर चला गया। उसके चले जाने के कारण विभा की कोमल छाती में दर्द आरम्भ हो गया। पहिले तो उसने विचारा कि आज वह नहीं पढ़ेगी, किन्तु कुछ सोच कर तत्क्षण ही बोली "बुला ला ! और सुन" उनसे कहना "बैठक में बैठा दे, मैं अभी आती हूँ।"

नौकर के जाते ही बिस्तर पर वह औंधी मुँह गिर पड़ी और तकिये में मुँह छिपा सिसक सिसक कर रोने लगी।

कुछ समय बाद आंख, मुँह धोकर हँसती हुई बैठक में पहुंची "आज मन में आया था कि छुट्टी मनाऊँ।"

"क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है ?"

"नहीं तबीयत तो ठीक है, किन्तु रविवार की छुट्टी मनाने की इतनी आदत पड़ गई है कि जी नहीं चाहता।"

अमर बाबू ने कहा "छुट्टी से माइक्रोप को अभी मेरे रक्त में मिलने का अवसर ही नहीं मिला ; किन्तु आज तो मैं भी छुट्टी ही लूँगा। कारण जानना चाहती हो ? तो सुनो, इस वर्ष कोपेन हेगेन में अन्तर्राष्ट्रीय मेथेमेटिकल कान्फ्रेन्स होगी। मेरी यह समझ में ही नहीं आ रहा कि उनकी दृष्टि में मेरा नाम आ किस भाँति गया ? अखिल भारतवर्ष में मुझे ही केवल यह निमंत्रण मिला है और मैं नहीं चाहता कि इतना बड़ा अवसर मेरे हाथ से निकल जाय।"

उत्साहित हो विभा बोली "आपको अवश्य ही जाना चाहिये।"

तनिक हँसते हुए अध्यापक बोले "मेरे उच्च अधिकारी, जो मुझे डेपूटेशन में भेज सकते हैं, मुझे भेजने में राजी नहीं कि कहीं मेरा दिमाग न खराब हो जाय। वे मेरे भले के लिये ही सोच रहे हैं फिर भी मैं किसी ऐसे व्यक्ति की खोज में हूँ जो अधिक बुद्धिमान हो। जिसे रखकर मैं कर्जा लेना चाहता उसे न तो तौल ही सकता हूँ और न कसौटी पर रख घिस कर ही दिखला सकता हूँ। हम विज्ञानी जीव हैं, अतः विश्वास करने के लिये प्रत्यक्ष प्रमाण चाहते हैं। अर्थ विज्ञान शास्त्री भी ठोस वस्तु ही खोजते हैं ; वे धोका नहीं खा सकते ."

उत्तेजित हो विभा बोली "कहीं से भी हो एक युवक इस कार्य के लिये खोज ही निकालूँगी। उसकी अवस्था अधिक नहीं होगी, आप निश्चिन्त रहें।"

दो चार बातों से उनकी समस्या नहीं सुलझी। उस दिन के लिये समस्या की थोड़ी बहुत शर्तें अवश्य हो गई। अमर बाबू मँझले कद के, श्याम वर्ण, दुबले पतले हैं। उनका माथा, जिस पर से बाल घटते जा रहे हैं, चौड़ा है। चेहरा देखने में अच्छा है और लगता है कि वह आज तक किसी से लड़े झगड़े भी नहीं हैं। राह चलते व्यक्तियों की आखें उनके ऊपर टिक जाती हैं। मित्र अधिक नहीं, किन्तु दो तीन व्यक्ति जो भी उन्हें जानते हैं उनसे बहुत ऊँची आशायें रखते हैं। अधिक व्यक्तियों से बातचीत करना भी उन्हें पसन्द नहीं और इसी कारण लोग इसे उनके हृदय का नीरसपन कहते हैं। तात्पर्य यह है कि वह अपने जीवन में अधिक मनुष्यों से दूर रहना चाहते हैं। बाहर के लोगों की उनके विषय में क्या धारणा है इसका उनको कोई ज्ञान नहीं।

अभीक के लिये, विभा आठ सौ रुपये के नोट अन्ध आवेग में ही ले आई थी। उसके मामा उस पर पूर्ण विश्वास करते हैं। सांसारिक विषयों में निपुण होते हुए भी विभा के मामा इस बात की कभी कल्पना भी नहीं कर सके कि स्त्रियों के जीवन में नियम के प्रबल व्यक्ति क्रम का झटका अकस्मात् ही कहीं से आ सकता है और विभा ने इस अकस्मात् झटके को ही अपने हृदय में देखकर आठ सौ रुपयों के नोट अभीक के सम्मुख रख दिये थे। उसका दान अभीक ने उसे लौटा दिया था अतः वह दान उसने पुनः अपने पास रख लिया। एक पुरुष से प्रेम करने वाली आज कल की दो स्त्री प्रेमिकाओं के हृदय में जैसी स्पर्धा होती है शीला के प्रति स्पर्धा विभा के हृदय में नहीं थी। इसीलिये स्वाधिकार को त्याग किसी को रुपये देने की बात वह अपने मन में नहीं ला सकी। उसने सोचा कि जो आभूषण उसे अपनी माँ से उत्तराधिकार में प्राप्त हुए हैं उन्हीं को बेचकर जो भी धन उसे प्राप्त होगा उसे अमर बाबू को देकर उनका ही नहीं तो देश का भी उपकार करेगी। जो बालक विभा के घर पर अपना जीवन यापन कर रहे हैं उनके

पढ़ाने का भी वह पूरा ध्यान रखती है। खाना पीना खा पीकर उसके पास अभी तक पढ़ने वाले छात्र बैठे थे। आज रविवार होने के कारण उनकी छुट्टी जल्दी ही कर दी है।

अपना बक्स खोल, जमीन पर बिछी चादर पर, विभा अपने गहने एक एक कर सजा रही है और अपने नौकर को उसने अपने परिवार के जौहरी को बुलाने भेज दिया है।

इतने में ही सीढ़ियों में किसी के चढ़ने की आवाज सुनाई दी। यह अभीक था। पहिले तो विभा ने गहनों को छिपा देने का विचार किया, किन्तु फिर उसने उन्हें वहीं पड़े रहने दिये। वह अभीक से किसी बात को छिपाना नहीं चाहती थी।

घर में प्रवेश करने के बाद कुछ देर तक तो वह यही सोचता रहा कि मामला क्या था। थोड़ी देर बाद वह बोला "उस असाधारण व्यक्ति के विदेश भेजने का खर्चा झेल रही हो? मेरे लिये तो तुम महामाया हो जो कि मुझे अपनी बातों में ही उलझाये रखती हो तथा अध्यापक के लिये मार्ग प्रदर्शक हो। क्या अध्यापक महोदय भी इस बात को जानते हैं कि उन्हें पार उतारने का प्रयत्न—नारी की दुर्बल भुजायें—कर रहीं हैं?"

"नहीं वह यह नहीं! जानते।"

"यदि उन्हें इस बात का ज्ञान हो जाय कि उनकी विदेश यात्रा के लिये तुम अपने आभूषण बेच रही हो तब क्या उनके वैज्ञानिक हृदय पर चोट नहीं पहुँचेगी?".

"मैं तो यही समझती हूँ कि क्षुद्रजनों के दान पर बड़े लोगों का अधिकार होता है और अपने उस अधिकार से दया तथा करुणा करते हैं।"

"यह बात तो मैं समझ गया। स्त्रियों के गहने हम लोगों के लिये ही होते हैं फिर चाहें हम कितने ही साधारण न हों; वे गहने किसी व्यक्ति

के विलायत जाने के लिये नहीं होते फिर चाहें वह कितना भी महान् क्यों न हो।" आभूषणों को देखते हुए वह बोला "यह तो चुन्नी और मोती का हार है, जिसे मैंने सबसे पहिले उस दिन देखा था जब मेरा तुम्हारा प्रथम मिलन हुआ था। उस प्रथम मिलन की स्मृति में यह हार दो हृदयों में घुल मिलकर एक हो गया है। यह हार क्या तुम्हारे अकेले का ही है, मेरा नहीं ?"

"अच्छा! यदि इस हार को तुम चाहते हो तो तुम्हीं ले लेना।"

"तुमसे अलग होकर यह मेरे किसी अर्थ का नहीं। इस प्रकार तो यह धन चोरी का हो जायगा। मैं, यह सब तो तभी लूँगा जब तुम मेरी हो जाओगी। मेरी यह साधना है और इसके बीच में यदि तुमने यह हार अन्य किसी को दे दिया तो तुम मुझे धोका दोगी।"

"यह आभूषण मेरी माँ ने मेरे विवाह के लिये दिये हैं और मुझे विवाह करना नहीं, फिर इनका क्या होगा? खैर अब किसी शुभ या अशुभ समय तुम मुझे इन आभूषणों को पहने कभी नहीं देखोगे।"

"मालूम होता है कि विवाह की बातें कहीं अन्यत्र हो रही हैं।"

"हाँ! हो तो गया है वैतरणी के किनारे; किन्तु एक काम करूँगी कि जिस लड़की से तुम विवाह करोगे उनके लिये कुछ गहने छोड़ जाऊँगी।"

अभीक बोला "शायद मेरे लिये वैतरणी का मार्ग बन्द है?"

"ऐसा मत कहो। सब सजीव युवतियाँ तुमसे विवाह करना चाहती हैं।"

"झूठ नहीं बोलूँगा, जन्म पत्री में लिखी हुई बात यदि बिल्कुल ही गलत हो तब तो कोई बात ही नहीं किन्तु उसके अनुसार यदि शनि की दशा में पुरुष को स्त्री न मिले तो समझ लो कि उसकी मृत्यु उसके सामने ही है।"

"यह हो सकता है किन्तु कुछ समय बाद स्त्री का सहवास भी आपत्ति-मूलक हो जाता है।" विभा ने कहा।

"यानी जिसे कहते हैं गठबन्धन। यद्यपि प्रसङ्ग तो दुःखपूर्ण है किन्तु सम्भावना के वह इतना नजदीक है कि उस पर तर्क भी करना व्यर्थ है। इसीलिये कहता हूँ कि जिस किसी दिन मुझे मौहर बाधे हुए तुम अचानक देखोगी 'परहस्तं गतं धनम्' सारा धन दूसरे के हाथ में जा चुका होगा।"

"अब मुझे और मत डराओ। तब मैं भी सोच लूँगी कि मेरे लिये दूसरे मनुष्यों के हाथ की कमी नहीं है।"

"अरे•••रे••••• ! विभा ! तुम्हारे मुँह से यह बात अच्छी नहीं निकली ! पुरुष तुम स्त्रियों को देवी बनाकर पूजते हैं क्योंकि उनका प्यारा न रहने पर तुम लोग मरने को प्रस्तुत हो जाती हो और पुरुषों को तो कोई भूल कर भी देवता नहीं कहता; क्योंकि यदि उन्हें किसी वस्तु का अभाव हो तो वे शीघ्र ही दूसरी वस्तु की खोज में लग जाते हैं। इसीलिये तो पुरुषों का सम्मान नहीं होता। और तुम स्त्रियाँ जो हो वह तो एक ही पुरुष के सम्मान को रखने के लिये अपने प्राण तक न्यौछावर कर देती हो। मनोविज्ञान को अभी यहीं छोड़ो; अमर बाबू के अमरत्व का विचार हमारे ही ऊपर छोड़ दो। क्या उनका मूल्य हम लोग नहीं समझ सकते? गहने बेच कर उन्हें लज्जा का पात्र मत बनाओ।"

"अभीक! ऐसी बात मत कहो। पुरुषों का यश स्त्रियों का सबसे बड़ा धन है। जिस देश में तुम लोग (पुरुष) उन्नति के शिखर पर पहुंचे हो वहाँ की हम स्त्रियाँ भी धन्य हैं।"

"तुम स्त्रियों की ओर देखकर मैं सदा यही सोचा करता हूँ कि हमारा यह देश वैसा ही हो जाय जैसा अतीत में था। खैर इस प्रसङ्ग को यहीं रहने दो इस सम्बन्ध में फिर बातें होंगी। इस देश में ऐसे बहुत से मनुष्य हैं जो अमरबाबू की उन्नति से ईर्ष्या करते हैं। यहाँ के मनुष्य महान् व्यक्तियों की उन्नति के मार्ग के कांटे है। किन्तु मुझे तुम उनमें से जिनके इतने नीच विचार हैं, मत समझना। सुनो, मैंने कितना बड़ा पापी पुण्य

कर्म किया है। दुर्गा पूजा के चन्दे के रुपये मेरे पास में थे और मैंने उन रुपयों को अमर बाबू की विलायत यात्रा के कोष में दे दिया है। मैंने इस सम्बन्ध में किसी से पूछ ताछ भी नहीं की है। देवी के भक्तों को मालूम भी तब ही होगा जब जीव बलि चढ़ाने के लिये उन्हें बाजार में नहीं घूमना पड़ेगा। मैं नास्तिक हूँ, किन्तु मुझे यह भी भली भाँति मालूम है कि सच्ची पूजा क्या होती है। वे धर्मात्मा, बलि चढ़ाने वाले, मेरी पूजा को क्या समझ पायेंगे ?"

"अभीक ! यह क्या किया तुमने ! जिस नास्तिक धर्म को तुम पवित्र समझते हो क्या वह पाप नहीं है ? क्या इस भाँति चन्दे के रुपयों को अमरबाबू के कोष में डालकर तुमने विश्वासघात नहीं किया है ?"

"यह मैं स्वीकार करता हूँ। किन्तु मेरे धर्म की दीवालें किसने हिलाईं थीं ? सुनो ! मेरे शिष्यों ने बड़ी धूम धाम से दुर्गा पूजन के लिये तैयारियाँ करलीं थीं ; किन्तु चन्दे में जो कुछ आया वह दुखदाई थोड़ा और हास्य-पूर्ण तो बहुत ही है। उस रकम से भोग के लिये बकरे भी नहीं आ सकते थे, हर्ष में खेद हो जाता। तय यह किया था कि हम लोग बड़े उत्साह से ढोल ताशे बजादेंगे, और काशीफल तथा पेठे के पेटों को अपने हाथों तलवार के जोर से फाड़ेंगे। नास्तिक के लिये इतना ही पर्य्याप्त है ; किन्तु धर्मात्माओं के लिये यह नहीं के बराबर है। मुझे सूचना देने से पहिले ही, न जाने कब, एक तो बन गया गुरु और बाकी के पांच उसके शिष्य। वे सब एक धनी बुढ़िया के पास पहुंचे और बोले कि देवी ने उनसे स्वप्न में कहा था कि यदि उसे बकरे आदि का खूब भोग न लगाया जायगा तो वह उसके पुत्र को, जो रंगून गया हुआ है, जीवित ही लील जायगी। इस प्रकार की बातें बनाकर उन्होंने उस बुढ़िया से पाँच हजार रुपये प्राप्त किये हैं। जब यह समाचार मुझे मिला तो मैंने उसी समय उस रुपये को ठीक ठिकाने लगा दिया। उससे मेरी जाति भले ही मारी गई हो, किन्तु रुपयों

के कलंक के दोष से बच गया। पाप स्वीकार कर प्रायश्चित कर लिया गया। अब पाँच हजार रुपयों में से उन्तीस रुपये बचे हैं और मैंने तुम्हें अपना सलाहकार बनाया है। रुपयों को मैंने काशीफल का कर्ज चुकाने को रख छोड़ा है।"

इतने में सुस्मि ने आकर कहा "बच्चू (नौकर) का बुखार बढ़ गया है उसके साथ खाँसी भी बढ़ रही है। डाक्टर साहब क्या लिख गये हैं सो पढ़लो।"

विभा का हाथ पकड़ कर अभीक ने कहा "तुम अखिल विश्व के लिये तो शुभ कामना करती हो, रोग ताप से पीड़ित व्यक्तियों की सहायता को सदैव तत्पर रहती हो किन्तु जिन हतभाग्यों का शरीर पूर्ण स्वस्थ है उनकी चिन्ता करने का तुम्हें अवकाश भी नहीं मिलता।"

"विश्व-हित के लिये नहीं वरन् एक भाग्यहीन को भुलाये रखने के लिये ही इतना काम करना पड़ता है। अब छोड़ो! यहीं बैठ कर कुछ समय तक इन आभूषणों की देखभाल करते रहना मैं अभी आती हूँ।"

"इन आभूषणों को देख कर मैं अपने लोभ का संवरण किस प्रकार कर सकूँगा?"

"तुम्हारा नास्तिक धर्म ही तुम्हें सम्हाले रहेगा।"

कितने ही प्रभात आये और कितनी ही रात्रियाँ बीत गईं किन्तु अभी तक विभा के पास अभीक का कोई पत्र नहीं आया। विभा का पुष्प जैसा मुख कुम्हला गया, काम में मन नहीं लगता और चिंताऐं बढ़ गई हैं। उसकी समझ में नहीं आता कि आखिर हो क्या गया। एक एक पल पहाड़ की भाँति बीत रहा है। रह रहकर उसे यही सोच होता है कि अभीक उस पर ही अभिमान करके कहीं चला गया है। घर तो उसने पहिले ही त्याग दिया था, उसके लिये बन्धन भी तो कोई नहीं था। न जाने कहाँ रूँठकर

चला गया है। शायद वह अब लौटकर नहीं आवेगा। उसका मन बार बार यही कहता "अभीक ! रूठो मत, तुम्हें अब मैं दुख नहीं दूँगी, लौट आओ।" अभीक का लड़कपन, उसका हठ, उसका लाड़ दुलार जितना विभा को याद आने लगा उसका हृदय, उस अतीत की स्मृति को स्मरण कर, उतनी ही अश्रुओं की झड़ियाँ उसके नेत्रों से लगा देता। पाषाण हृदय कह कह कर वह अपने आपको स्वयं बार बार धिक्कार रही थी।

इतने में एक पोस्टमेन ने एक चिट्ठी, जिस पर स्टीमर की छाप लगी थी, लाकर उसको दी। उस पत्र में लिखा था।

"जहाज का स्टोकर" होकर विलायत जा रहा हूँ। मेरा काम इञ्जन में कोयला झोंकना है। मेरा आदेश यही है कि तुम मेरी चिन्ता न करना, किन्तु तुम मेरी चिन्ता कर रही हो और यह जानकर मुझे मीठी २ प्रसन्नता हो रही है। इतना तुम्हें बताये देता हूँ कि मुझे इञ्जन के ताप में तपने का अभ्यास है। यह जानकर तुम्हें अवश्य क्रोध आवेगा कि मार्ग के लिये मैं अपने साथ कुछ नहीं ले जा रहा। इसका कारण है कि मैं कलाकार हूँ जिस पर तुम्हें तनिक भी श्रद्धा नहीं। इसका मुझे दुख है, किन्तु इसके लिये दोष तुम्हें नहीं दूँगा। मुझे विश्वास है कि उस रसिक देश के कला-प्रिय मनुष्य अवश्य ही मेरा आदर करेंगे और इसी आशा को लेकर मैं वहाँ जा रहा हूँ।

अनेक अशिक्षितों ने मेरे चित्रों की प्रशंसा करके उन चित्रों की आत्मा को दुखाया है और अनेक झूठ बोलने वालों ने मेरे साथ छल किया है। विभा ! तुमने, यद्यपि तुम यह भली भाँति जानतीं थीं तुम्हारी थोड़ी सी प्रशंसा भी मेरे लिये अमृत थी, मेरे हृदय को शान्ति प्रदान करने के लिये मेरी प्रशंसा कभी नहीं की। तुम्हारे चरित्र के अटल सत्य के कारण मैंने बहुत दुख पाया है; किन्तु फिर भी उस सत्य को मैंने बहुत भारी मूल्य दिया है। संसार जिस दिन मुझे सम्मान देना चाहेगा उस दिन सबसे आगे

बढ़ कर तुम ही मुझे सबसे पहिले सम्मान दोगी और उस सम्मान में तुम्हारे हृदय का पवित्र अमृत मिला होगा। जब तक मेरे हृदय का यह स्वप्न पूर्ण न होगा तब तक तुम मेरी प्रतीक्षा करोगी। इस बात को ही हृदय में रख कर मैं उस कठिन पथ पर जहाँ से मेरी उन्नति की मञ्जिल काफी दूर है, चल रहा हूँ।

अब तुम्हें भलीभांति विदित हो गया होगा कि तुम्हारा हार चोरी चला गया है। तुम उस हार को बाजार में बेचने जा रही हो, मेरा हृदय उसकी चिन्ता सहन नहीं कर सका। उस हार को बेचकर तुम मेरे हृदय में काँटे चुभाना चाहती थीं। तुम्हारे उस हार के बदले में मैं अपने बनाये हुए चित्रों का एक बण्डल तुम्हारे आभूषणों के बक्से में रख आया हूँ। यह जान कर तुम मन ही मन हँसना मत। अपने देश में उनकी कीमत रद्दी के कागजों से अधिक नहीं मिल सकती। विभा! प्रतीक्षा करो। तुम मेरे द्वारा ठगी नहीं गईं। मैं दावे से कहता हूँ कि जिस भाँति फावड़े से खोदने पर भूमि से अकस्मात् गुप्त धन निकल आता है उसी भाँति किसी दिन मेरे चित्रों की कीमत अकस्मात् ही मिल जायगी। हँसना मत, तुम स्त्रियों की दृष्टि में पुरुष, जिन्हें तुम प्यार करती हो, बच्चे होते हैं। तुम्हारी इस मन्द मुस्कान को मैं कल्पना के पुष्प में भौंरे के समान बन्द कर और तुम्हारे सुरभि पूर्ण घर से स्मृति स्वरूप यह मधुमय हार समुद्र के विशाल वक्षस्थल को चीर अपने साथ विदेश लिये जा रहा हूँ। मैंने देखा है कि तुम भगवान के सामने न जाने क्या क्या प्रार्थना किया करती हो; किन्तु तुम अब यही प्रार्थना करना कि तुम्हारे पास से जाने की मेरी साधना के सुनहले स्वप्न पूर्ण हों।

मैं यह नहीं समझ पाता कि तुम ने मुझसे कभी मन ही मन ईर्ष्या की है। यह ध्रुव सत्य है कि मैं स्त्रियों को प्रेम करता हूँ। शायद प्रेम न करता हूँ किन्तु स्त्रियाँ तो मुझे अच्छी लगती ही हैं। उन्होंने मुझसे प्रेम किया

है यह उनकी मेरे प्रति कृतज्ञता है। किन्तु अपने हृदय को मैं यही सोच कर शान्त कर लेता हूँ कि आकाश में जग मग करने वाली असंख्य तारिकाओं में से केवल तुम्हीं एक मेरे लिये पीयूष–वर्षिणी हो। वे स्वप्न थीं किन्तु तुम सत्य स्वरूपा हो। यह सब बातें भावावेश सी ज्ञात पड़ती होंगी। मेरे लिये कोई उपाय नहीं क्योंकि मैं कवि नहीं हूँ। मेरी भाषा की गति जो कि हृदय की लहरों के साथ आगे बढ़ रही है का सम्बन्ध हृदय से है। यह मैं जानता हूँ कि जहाँ वेदना है वहाँ गाम्भीर्य आवश्यक है अन्यथा सत्य की मर्यादा जाती रहती है। दौर्बल्य का रूप चंचलता है, जिसे मेरे अन्दर देख कर तुम कई बार हँसी भी होगी। इस पत्र को देख कर कहोगी—'यह भाव तो अपने अभीक जैसा ही है।' किन्तु शायद इस बार तुम हँस न सकोगी। मैंने तुम्हें प्राप्त करने के लिये बहुत प्रयत्न किये किन्तु पा न सका। हृदय के दान में तुम पाषाणी हो। इसके लिये और कोई कार्य नहीं हो सकता और शायद अब होगा भी नहीं। वास्तव में मैं इस अपने जीवन में तुम्हारे सामने पूर्ण रूप से नहीं चमक सका। इस तीव्र अतृप्ति ने मुझे दीन बना रखा है। इसलिये चाहे मैं अभी विश्वास न करूँ और शायद बाद में कभी करना ही पड़े तुमने पूर्ण रूप से मुझे अपना प्रेम नहीं दिखलाया, किन्तु अपनी गम्भीरता से तुमने मुझे जो दान दिया है उसे मैं नास्तिक समझूँगा कि तुम्हारा प्रेम अलौकिक था। इसी का सहारा लिये मैं तुम्हारे भगवान के आस पास चक्कर लगाता रहा। मुझे ठीक नहीं ज्ञात, सम्भव है, मेरी सब बातें बनावटी हों; किन्तु मेरे हृदय में एक गुप्त स्थान है, जिसे मैं ही देख रहा हूँ, जहाँ पर कठोर आघात होते ही स्वयं ही छन छन कर बातें निकल आती हैं। हो सकता है कि वह कोई इतना बड़ा सत्य है जिसे मैं स्वयं नहीं समझ पा रहा हूँ।

मेरी पीयूष वर्षिणी विभा! इस संसार में मैंने सबसे अधिक प्रेम तुम्हारे ही रजत स्वरूप से किया है। उस प्रेम की विस्तृत किन्तु सत्य एक कहानी है। यदि मैं ऐसा मानलूँ कि तुम्हारा घर और तुम्हारे देवता का

घर एक ही है तो मैं नास्तिक किसी भी द्वार में जाने को तैयार हूँ। फिर जब मैं उस द्वार से बाहर जाऊँगा तब, चाहे तुम मेरा विश्वास मत करना, अपना सर्वस्व तुम्हारे ही हाथों में सौंप दूँगा। जिसे तुम अपने देवता के तीर्थ पथ तक पहुँचा देना, तथा जिसको प्राप्त कर तुम्हारा विश्वास एक पल के लिये भी मुझ पर कम न हो। तुम से दूर होकर आज मेरे प्रेम की उज्ज्वलता चन्द्र चन्द्रिका की भांति और भी निखर आई है; तुम्हारे प्रेम ने तर्क तथा युक्तियों के कांटों को दूर कर मेरे मार्ग को प्रशस्त कर दिया है। मेरी प्रेम वञ्चिना आँखें तुम्हें अलौकिक रूप में देख रही हैं। आज तक मैंने सदा यही चाहा कि मैं तुम्हें अपनी बुद्धि से, तर्क से प्राप्त करलूँ, किन्तु आज मेरा सर्वस्व यही चाहता है कि तुम मेरी जीवन सङ्गिनी होकर मुझे प्रकाश दो।"

तुम्हारा अनास्तिक
पुजारी
अभीक!

आखिरी बात

जीवन की बहती हुई तीव्रगामी सरिता के प्रवाह में, जहाँ कि अचानक ही कहानी अपना स्वरूप धारण कर लेती है उसके बहुत पहिले ही से नायक तथा नायिकायें कहानी के साथ २ अपना सम्बन्ध और परिचय स्थापित करते हुए चले आते हैं। तत्पश्चात् उन कार्य व्यापारों का अनुसरण, जिसे नायक तथा नायकाएँ आपस में करते हैं, अपनी कहानी में अनिवार्य रूप से कहना ही पड़ता है। अतः मैं यह बतलाने के लिये कि कौन हूँ पाठकों से कुछ समय प्राप्त करना चाहता हूँ, किन्तु मैं अपना नाम तथा स्थान नहीं बतलाना चाहता। इसको तो छिपाना ही अनिवार्य है। यदि मैं ऐसा नहीं करूँगा तो मेरे मिलने जुलने वाले लोग मुझसे प्रश्न पूँछ पूँछ कर मेरी नाक में दम कर देंगे। अब मैं यही सोच रहा हूँ कि आपके सामने क्या नाम लेकर आऊँ। अपना प्रेममय नाम रख कर मैं यह नहीं चाहता

कि संगीतज्ञ की तान की भाँति कहानी विस्तृत हो उठे। हाँ! मैं अपना नाम 'नवीन माधव' रख सकता हूँ। 'नवीन माधव' नाम की श्यामता को हल कर मैं अपना नाम 'नावरुण सेन गुप्त' रख सकता हूँ' किन्तु इस नाम में सचाई का बोध नहीं होता, तथा यदि मैं अपने नाम को इतना बड़ा रखूँ भी तो इतना बड़ा नाम पाकर यह कहानी भी पाठकों में विश्वास कदापि न संचरित कर सकेगी। और लोग भी यही समझेंगे कि मैं मांगे का कपड़ा पहिन कर साहित्यिक गोष्ठी में अपना ऐश्वर्य दिखला रहा हूँ।

बंगाल के महान क्रान्तिकारियों में मेरा भी एक स्थान है। ब्रिटिश साम्राज्य की महान् शक्ति ने देश निकाला देकर मुझे मेरे देश से दूर अण्डमान नीकोबार द्वीप (काले पानी) भेज दिया था। अनेक विपत्तियों को चीरता हुआ, अन्त में, मैं अफगानिस्तान की हरी भरी भूमि पर पहुँच ही गया था; किन्तु अफगानिस्तान में भी मेरा गुजारा न हो सका। इसीलिये एक जहाज पर खलासी की नौकरी करके मैं अपने देश से दूर अमरीका जा पहुँचा। मेरे अन्दर एक लगन बहुत दिनों से लगी हुई थी कि मुझे इस जीवन में अपनी भारत माता, जिसके चरणों एवं हाथों में ब्रिटिश साम्राज्यशाही की कठोर हथकड़ियाँ पड़ी हैं और जो कि अहोरात्रि परतन्त्रता के दुख से कराहती रहती है, हथकड़ियों को एक दिन अपने प्राणों की भी आहुती देकर छिन्न विछिन्न करना है। किन्तु विदेश की हवा खाकर मैं यह भली भाँति समझ गया कि क्रान्ति का जो स्वरूप हम क्रान्तिकारियों ने अपनाया है उससे हमारा स्वप्न पूरा नहीं हो सकता। अभी तक क्रान्ति के उस रूप ने हम हतभाग्यों के भाग्य को ऊँचा नहीं उठाया वरन् नीचे से गिराया है। तथा ब्रिटिश साम्राज्यशाही के विशाल छत्र तक उसका एक भी झोका नहीं पहुँच सका। इस प्रकार अपने प्राणों की आहुति देने से कोई लाभ नहीं यह तो परवानों का जलकर शमा पर मरना व्यर्थ है। जब क्रान्ति की धधकती हुई ज्वाला में मैं कूदा था उस समय मुझे यह ज्ञान नहीं था कि इसमें युग युग से चली आने वाली भावनाओं को नहीं वरन्

अनेक उत्पन्न होने वाली नवीन चिन्ताओं की ज्वालायें धधकाई जा रही हैं। ठीक इसी समय मेरे कानों में योरोपीय महासमर के बिगुल का गगन भेदी तीव्र स्वर सुनाई दिया। उस समय मेरे इन विचारों ने मेरे अन्दर उथल पुथल मचा दी कि क्याब्रिटिशशाही के इतने बड़े साम्राज्य को थोड़े से इने गिने क्रान्तिकारियों के बल पर हिलाया जा सकता है। मैंने सोचा था कि हम भारतवासियों के घरों में खुशी के स्थान पर यदि आत्महत्या का अवसर आजाये तो उसके लिये भी हमारे पास साधन नहीं है। यही सब बातें सोच कर यह निश्चित किया कि इस विप्लव को उठाने से पूर्व अपने देश वासियों को उत्साहित, तथा अपने देश की दीवालों को मजबूत करना होगा ताकि वे अपने खुले वक्ष पर बड़ी से बड़ी टक्कर झेल सके। समय को देखते यह भी सोचना पड़ा कि केवल अपने नाखूनों के बल पर हम विदेशियों से कोई टक्कर नहीं ले सकते, यह युग मशीनों का है अतः हमें उनका भी प्रबन्ध करना होगा। कायरों की भांति मर जाना तो आसान है किन्तु कार्य करते करते वीरगति को प्राप्त करना कठिन। अभी अधीरता से काम नहीं चल सकता, धैर्य से काम करना होगा—और यह मार्ग लम्बा है, जिस पर चलते चलते न जाने कितने देश की बलि वेदी पर मर मिटें। साथ ही साथ इस कार्य की साधना भी कठिन है।

मैंने इस यंत्र विद्या को सीखना आरम्भ कर दिया और येन केन प्रकारेण डेट्रायट में फोर्ड के मोटर कारखाने में घुस भी गया। मैं अभी काम सीख ही रहा था, किन्तु मुझे लगता था कि जैसे मैं रात दिन सफलता प्राप्त करता जा रहा था। एक दिन मेरा दिमाग पलट गया और सोचने यह लगा कि मि० फोर्ड से कहूँ कि मेरी उन्नति नहीं मेरे देश की उन्नति हो रही है। मैंने सोचा कि शायद यह सुन कर वह स्वतन्त्र अमरीकी, जो धन कमाने में जादूगर की भांति था, मेरी उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर देगा। किन्तु यह जान कर वह अंग्रेज मन ही मन हँस कर बोला "मैं पुराना अंग्रेज हूँ जिसकी रग रग में देशाभिमान है और मेरा नाम है हेनरी फोर्ड।

इंगलेण्ड के हमारे ममेरे भाई किसी काम के नहीं, मै उन्हें काम का आदमी बनाना चाहता हूँ और मेरा प्रण भी यही है।" मैने भी सोचा कि यदि एक भारतवासी को भी वह इस संसार में काम का आदमी बनाने का उत्साह रखता हो तो आश्चर्य की बात नहीं। वहाँ रह कर मेरी समझ में एक बात तो आगई थी कि धनी लोगों की सहानुभूति धनिकों के ही साथ हो सकती है; किन्तु जब मैंने देखा कि मैं मोटर के पहिये बनाने मात्र से मैं अधिक उन्नति नहीं कर सकता तब मेरे सुसुप्त नेत्र एक दम से खुल गये। मैंने सोचा कि यंत्र विद्या सीखने के लिये मुझे उसकी गहराई में उतरना होगा। यंत्र बनाने के लिये सर्व प्रथम कच्चा माल बनाना तथा जोड़ना आवश्यक है। पृथ्वी ने धनवानों के ही लिये अपने अन्तस्थल में खनिज पदार्थ एकत्रित कर रखे हैं। विश्व भर के शक्तिशाली पुरुषों ने, जिनकी भुजाओं में बल है, सर्व प्रथम इन्हीं पदार्थों पर विजय प्राप्त की और निर्बल लोग, भुजाऐं दुर्बल होने के कारण, पृथ्वी के ऊपर उत्पन्न होने वाली खेती पर ही विजय प्राप्त कर सके। पृथ्वी की कठोर छाती पर अपने हलों की नोकों को घिसते घिसते गरीब किसानों की हड्डियाँ तथा पसलियाँ भूखे जानवरों की भांति निकल आई हैं तथा दो टुकड़े रोटी का भी उनका गुजारा नहीं हो रहा है। यही सोचकर मैं खनिज विद्या सीखने को पूरी तरह से जुट गया। मि० फोर्ड ने कहा "अंग्रेज किसी भी काम के आदमी नहीं।" इसका प्रमाण भारतवर्ष में मिल गया। एक दिन उन्होंने नील की खेती स्वयं आरम्भ की दूसरे दिन चाय की। दफ्तरों में बैठ कर लोगों ने कानून और नियम तो चालू कर दिये किन्तु वे बेचारे न तो वहाँ की खनिज सामग्री का ज्ञान प्राप्त कर सके और न वहाँ के रहने वाले के मनोविज्ञान का। पटसन उत्पन्न करने वाले किसानों को बैठे बैठे दुख देते रहे हैं। जमशेद जी टाटा को मैंने, समुद्र के उस पार रहते हुए भी प्रणाम किया। तथा यह भी सोच लिया कि अब अंग्रेजों के साथ फुलझड़ी का खेल नहीं खेलूँगा। "पाताल में अवस्थित भारत के खनिज पदार्थों को निकालने अब मैं भारत जाऊँगा।

और स्वदेश पहुंच कर बूढ़े मनुष्यों के साथ, जो कि बालकों की भांति रोते रोते माँ के आँचल में मुँह छिपा लेते हैं, नहीं रहूँगा। और अब मैं अपने देश वासियों को भूखा नङ्गा ही कहूँगा तथा उनको दरिद्रनारायण कह कर कोई जादू मंत्र नहीं करूँगा। बचपन में इन नादानी भरे खेलों को मैं बहुत खेल चुका हूँ; कवियों के पत्थर के भगवान के सामने, जिनके ऊपर सोने चाँदी के वर्क लगे रहते हैं, बैठ कर नयनों से बहुत नीर बहा चुका हूँ। किन्तु अब यह नहीं मानूँगा। इन जीती जागती बुद्धिवाले देश में आकर वास्तविकता को अपनी ही आँखों से देख, समझ कर ही कमर कस कर काम करना प्रारम्भ किया है। अबकी बार भारत पहुंच कर यह क्रान्तिकारी विज्ञानी बंगाली कुल्हाड़ी तथा फावड़ा लेकर पृथ्वी के अन्तराल में छिपी हुई रत्न मञ्जूषाओं को प्राप्त करने के लिये क्रान्ति मचायेगा। कल्पना की साधना में पागल लोग मेरी इस धुन को समझ ही नहीं पायेंगे कि वास्तव में सच्ची देश पूजा तो यही है।

फोर्ड के कारखाने से निकल कर मैंने ६ साल खनिज विद्या के सीखने में व्यतीत कर दिये। योरोप के भिन्न भिन्न केन्द्रों में घूम कर; अपने हाथों से काम करके, मैंने कार्य करने की प्रत्यक्ष शिक्षा प्राप्त करली है तथा दो तीन यंत्र अपने हाथ से भी बनाये हैं; तथा मुझे मेरे इस कार्य में गुरुजनों ने भी उत्साहित किया है। अब काम करने का मुझे अपने हाथों पर पूरा भरोसा हो गया है तथा इस काम को सीख कर अब मैं अपने पूर्व अकृतार्थ जीवन को कोस रहा हूँ।

शायद, इन सब बातों को छोड़ कर भी मेरा काम चल जाता, क्योंकि मेरी इस छोटीसी कहानी से उनका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। किन्तु इस सम्बन्ध में एक छोटीसी बात कहनी थी, पहिले मैं उसी को कहता हूँ। यौवन के उन्माद में, जब नारी का आकर्षण पुरुष हृदय पर विद्युत की भांति होता है। और जब कि नारी पुरुष हृदय पर मेघों की भांति छा जाती

है तब उस घटा में सरस हृदय, आकर्षण खोजने के लिये, निकल ही पड़ता है। किन्तु मेरे यौवन में मेरा हृदय इस ओर किसी भी भांति आकर्षित नहीं हुआ। मैं किसी अन्य विचार में डूबा हुआ था। यौवन के उस रङ्गीन संसार की ओर से मैंने अपने नेत्र फेर लिये थे, तथा यह सोचकर कि मैं 'कर्म योगी' हूँ—सन्यासी हूँ,— अपने मन को नियंत्रित कर लिया था। शादी करने के लिये लड़की वालों ने मेरे घर की खाक छान डाली थी, किन्तु मैंने यह कहकर मना कर दिया था कि 'यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी लड़की की शादी होते ही विधवा हो जाय तो उसका विवाह मेरे साथ कर दो अन्यथा शादी के लिये मेरे पीछे मत पड़ो।'

विदेशों में नारी संगति से बचने पर कोई नियंत्रण नहीं है। वहाँ रहकर मुझे यही आशङ्का थी कि कहीं किसी से मेरा सम्बन्ध स्थापित न हो जाय। स्वदेश में रहकर मैंने स्त्रियों के मूक नयनों में यह पढ़ा था कि मैं भी एक पुरुष हूँ। उनकी इस नीरव भाषा सुनने के अतिरिक्त मुझे उनके श्री मुख द्वारा किसी भी भाँति की भाषा सुनने की सम्भावना तो थी ही नहीं। इसलिये ही विदेशों में रहकर इस नारी भाषा को विचार ने की मुझे आवश्यकता ही नहीं थी। विलायत में , जहाँ जाकर मैंने सोचा कि वस्तुओं के आविष्कार में मेरी बुद्धि अन्य लोगों से अधिक तीव्र है, मुझे यह भी मालूम हुआ कि मैं किसी से कम सुन्दर भी नहीं हूँ। मेरे देशवासी पाठकों के हृदय में शायद यह आशंका हो कि मेरा मन वहाँ की युवतिओं पर फिसल गया था, किन्तु मैं इस बात को सत्य कहता हूँ कि मैंने अपने हृदय को उन लोगों के बनाव श्रृङ्गार पर कभी भी मोहित नहीं किया था। यह सम्भव है कि मेरा स्वभाव कठोर हो और पश्चिम बंगाल के लोगों की भाँति मैं शौकीन नहीं हूँ , क्योंकि मैंने अपने हृदय को लोहे की कठोर सांकल में कसके जकड़ कर रख रखा था। किन्तु इसके साथ हो साथ लड़कियों के साथ प्रेम का खेल रच अपने हृदय को बहला कर अवसर पाते ही उनका साथ छोड़कर अलग हो जाना भी मेरे स्वभाव के प्रतिकूल था। क्यों कि मैं यह भली भाँति जानता

था कि जिस नियम को लेकर मैं आज तक संसार में जीवन यापन करता चला आ रहा था, उस नियम को त्याग देने पर एक मिनिट में मेरा जीवन पानी में उठने वाले बुद बुदे की भांति समाप्त हो जायगा। मेरे सम्मुख इस समय बीच का कोई दूसरा मार्ग नहीं था। इसके अतिरिक्त मैं गाँव का एक सीधा साधा गँवार हूँ और स्त्रियों के विषय में सदा से ही मैं संकुचित रहता चला आया हूँ। सायद वह संकोच यहाँ भी नहीं मिटता और मैं यह भी नहीं चाहता कि विदेश में जाकर मैं उसे भूल जाऊँ। बस इसी कारण मैं उनव्यक्तियों से, जो नारी से प्रेम कर—अहंकार करते हैं, घृणा करता हूँ।

विदेश में रह कर मुझे काम करने की अच्छी डिग्री मिली थी। किन्तु यह जान कर कि ये डिग्रियाँ सरकारी काम के मिलने में सहायक नहीं हो सकती मैंने, यह समझ कर कि चन्द्रवंशी राजा छोटे नागपुर नरेश चण्डवीर सिंह जी के दरबार में काम कर रहा हूँ, अपना काम आरम्भ कर दिया। सौभाग्य में चण्डवीर सिंहजी के छोटे पुत्र केम्ब्रिज में पढ़ने के लिये आये और दैवयोग से ज्यूरिक में मेरी और उनकी मुलाकात हो गई थी और मेरी ख्याति उनके कानों तक पहुंच गई। मैंने उनको अपनी योजना समझा दी जिसे सुन कर वह बहुत ही उत्साहित हुए। स्वदेश लौट कर उन्होंने मुझे स्टेट में जियोलॉजिकल सर्वे के काम में लगा दिया। यह कार्य किसी अगं-रेज को न देकर मुझे देने पर ऊपर के आदमी मुझसे अति ईर्षित हो उठे देविका प्रसाद बड़े हठीले स्वभाव के साथ ही साथ क्रोधी भी थे। वृद्ध नरेश के मन में न जाने कितनी बार मुझे निकाल देने का विचार आया, किन्तु फिर भी मैं अपने पद पर बना ही रहा।

स्वदेश लौटने पर मेरी माँ ने मुझसे कहा "बेटा ! अब तो तुमको काम अच्छा मिल गया है, मेरी बात मान जाओ शादी विवाह कर लो। तुम्हारी शादी हो जाने से मेरी वर्षों की इच्छा पूर्ण हो जायगी।"

उत्तर देते हुए मैंने कहा "माँ ! शादी कर लेने से इतने दिनों की मेरी साधना निष्फल हो जावेगी। मैंने जो कार्य आरम्भ किया है उसके साथ यह शादी का चक्कर नहीं चल सकता।" इस प्रकार मेरी माँ की यह अभिलाषा पूरी न हो सकी क्योंकि शादी न करने का मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया था। यंत्र तन्त्र बाँध बूध कर मैं जंगलों में घूमने निकल दिया।

अबकी बार मेरी देश व्यापी कीर्ति की सम्भावना में जो पुष्प विकसित हुआ उसमें सौरभ भी है तथा पराग भी। पृथ्वी के अञ्चल में सोये हुए पत्थरों से बातें करता हुआ मैं मिट्टी को खोजने लगा। न जाने किस उन्माद में उस समय आकाश का हृदय राग रञ्जित हो रहा था। शाल वृक्षों की डालियों पर नवीन मञ्जरियाँ निकल रहीं थीं, तथा मधुमक्खियाँ उनका पराग पान करने के लिये इधर उधर मंडरा रहीं थीं। गेहूँ के बाल पक गये थे, किसान लोग मन मोहिनी तानें गा गा कर जौ इकट्ठा कर रहे थे, शहतूत के पेड़ों से रेशम निकालने में बहुत से लोग व्यस्त थे, और महुआ बीनने में सन्थाल लोग लगे हुए थे। न जाने किस व्यथा को लिये हुए, अपने कूल कछारों से टकराती, बातें करती, इठलाती हुई सरिता नवयुवती के समान अपने प्रेमी सागर से मिलने भागी जा रही थी। मैंने उस द्रुतगामी नदी का नाम 'तनिका' रखा। यह क्लास या कारखाने का कोई कमरा नहीं वरन् यह तो प्रकृति का हरीतमामय अञ्चल है, जहाँ पर मानव को सहारा देकर वह उनके हृदय में ठीक उसी भांति स्नेह की रङ्गीन किरणें भर देती है जिस भांति उदय होता हुआ चितेरा बाल रवि अपनी चपल उँगलियों से आकाश में भांति भांति के रङ्ग भर देता है।

प्रकृति का यह सौरभ भरा साम्राज्य देख मेरे हृदय पर आवेश की रंगीनी आ गई थी, कार्य करने की इच्छा कम होगई थी। यह देख कर मैं अपने मन पर क्रोधित हो रहा था तथा अपने मन की पतवार पर जोर लगा रहा था कि प्रकृति जाल ने मेरे हृदय को कैसे फँसा लिया। इस प्रकार

की ट्रॉपिक्स हमारे खून में मिल गई है तथा शैतान की तरह हम पर जादू चला रही है। हमको इन बातों से किसी न किसी भाँति बचना होगा।

भगवान भास्कर अस्ताचल को जाने का प्रयत्न कर रहे हैं। बीच में रेती का टापू फोड़ कर नदी दो भागों में विभक्त हो गई है। उस रेती के टीले पर बगुलों की पंक्ति बैठी हुई न जाने कौन सी समस्या सुलझा रही है। दिवस के अन्त में नित्य ही यह दृश्य मुझे मेरे कार्य समाप्त की ओर सकेत किया करता है। अपनी झोली से मिट्टी या पत्थर के कुछ टुकरे डालकर मैं लेबोरेटरी में उनकी परीक्षा करने चला गया। क्षितिज के समान मध्याह्न का समय किसी भी काम का नहीं क्योंकि मानव को यह उसके कार्य की ओर से विरक्त करता है। विशेष कर निर्जन वन की वनस्थली में, जहाँ पर कि प्रकृति स्वतन्त्र हाथों से पीयूष वर्षण करती है, इसीलिये मैंने यह समय मिट्टी पत्थर की परख में व्यस्त कर रखा था। डाइनुमा से बिजली जलाकर, पैमाने आदि लेकर मैं बैठ जाता था। यह काम करते करते किसी किसी दिन तो रात के बारह एक बज जाते। आज मैं खोज कर ही रहा था कि मिट्टी में मैंगनीज का कुछ लक्षण दिखलाई दिया और इसीलिये उत्साहित हो मैं बंगले को ओर बढ़ा चला जा रहा था। मेरे सिर के ऊपर केसरिया रंग के आकाश में पक्षी पंखों की नीरव उड़ान से अपने नीड़ों की ओर चले जा रहे थे।

इसी समय काम से लौटने पर मेरे सम्मुख एक बाधा आ उपस्थित हुई। जंगल के टीले पर पाँच शाल के वृक्षों का एक समूह सा था। यदि उस झुरमुट में कोई बैठा हो तो उसे केवल एक संध में से ही देखा जा सकता था, सम्भावना यही थी कि शायद देखने वाला एक दूसरे को देख न सके। उस दिन मेघों में से विचित्र ज्योति निकल रही थी। उस झुरमुट में फैला हुआ प्रकाश ऐसा लग रहा था मानो कि सूर्य के आंचल से रंगीन आभा फूट रही हो। उस झुरमुट में पेड़ के तने से पीठ का सहारा दिये, पैर

सिकोड़े एक नव-युवती अपनी डायरी में कुछ लिख रही थी। क्षण भर में मुझे यह एक विस्मय जान पड़ा। मेरा अपना तो यही विश्वास है कि जीवन में ऐसी घटना कभी देवयोग से ही घटा करती है। पूनम की रजत ज्योत्सना में जिस प्रकार कल्लोलिनी की हलकोरे मारती हुई लहरें अपने फूलों का मधुर चुम्बन करती है उसी प्रकार मेरे हृदय में भी विस्मय की लहरें अपूर्व जिज्ञासा के साथ उठ रही थीं।

यह देख कर, कि मैं उस दृश्य को एक वृक्ष की ओट में खड़ा खड़ा देखता रहा, मुझे स्वयं आश्चर्य सा होने लगा। मेरे अनुभवी जीवन में अनेकों ऐसे अवसर आये हैं जब मेरा हृदय ऐसे सुन्दर स्थानों पर जा जाकर रुका है, इस प्रकार के दृश्यों से कतराकर मैं कितनी ही बार निकल आया हूँ ; किन्तु मेरे हृदय को यह अनुभव हुआ कि मैं इस मनोहर दृश्य से आज बच नहीं सकूँगा लेकिन इस प्रकार सोचना या कहना मेरे स्वभाव के प्रतिकूल है। मैं यह नहीं जानता कि अन्य मनुष्यों की भाँति मेरा भी हृदय आज क्यों मचल रहा है ? मैं अपने आप से पूर्णतया परिचित हूँ कि मेरा हृदय एक चट्टान की भाँति मजबूत है। किन्तु उस युवती को देखकर मेरे पाषाण हृदय में भी आज अचानक ही स्नेह का झरना बहने लगा।

मेरे मन में कई बार आया कि युवती से बात चीत की जाय, किन्तु यह सोचकर, कि इससे बातें किस प्रकार प्रारम्भ की जाँये, चुप हो गया। उस युवयी का वास्तविक नाम, जो बाद में मुझे मालूम हो गया, न लेकर मैंने ' अचिरा ' रखा है ; किन्तु, यद्यपि बतला दूँगा, उसको मैं व्यवहार में नहीं लाऊँगा। इसका क्या अर्थ है ? यही अर्थ है इसका कि प्रकाश मेरे हृदय पर विद्युत की भाँति छा गया था। उस युवती का मुख देख कर यही लगा कि उसको यह मालूम हो गया था कि कोई पेड़ के पीछे खड़ा था। शायद मेरे वहाँ खड़े होने की आवाज़ उसके कानों तक पहुँच गई थी। उसने लिखना तो बन्द कर दिया किन्तु उस स्थान से उठी नहीं। शायद वह

यही सोचकर नहीं भागी कि कहीं देखने वाले पर उसका भागना प्रगट न हो जाय। मैंने एक बार सोचा भी कि उससे कह दूँ 'माफ कीजियेगा'; तत्क्षण ही मेरा विचार पलटा, मैंने सोचा कि मुझसे अपराध क्या हुआ है जिसे कि वह क्षमा करेगी। कुछ दूर हट कर मैंने अपनी छोटी विलायती कुदाली से कुछ खोदने का बहाना बनाया तथा अपनी झोली में बेकार का सामान मिट्टी पत्थर आदि भर लिया। उसके बाद पृथ्वी पर अपनी वैज्ञानिक अन्वेषक दृष्टि फेंकता हुआ वहाँ से चला गया। अपने उपक्रमों से मैंने उस युवती को अपनी ओर आकृष्ट करना चाहा किन्तु वह मेरी ओर तनिक भी नहीं मुड़ी इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह मुग्ध पुरुष हृदय की दुर्बलताओं को भली भाँति पहिचानती थी। फिर भी मैंने आशा की कि मेरे सम्बन्ध में विचार करने से उसका हृदय अवश्य ही आनन्दित हुआ होगा। मैं नहीं जानता कि मेरे उन पेड़ों की आड़ को लाँघ जाने से क्या घटना घटती या तो वह मुझे देख कर क्रोधित हो उठती या फिर क्रोधित होने का बहाना करती। अति चञ्चल होकर मैं अपने बंगले की ओर जा रहा था कि धरती पर पड़े हुए लिफाफे के दो टुकड़ों पर मेरी दृष्टि पड़ी। मैंने सोचा कि मैं उन्हें न उठाऊँ; किन्तु मेरा हृदय जिज्ञासा से चंचल हो उठा अतः उन्हें उठाकर मैं पढ़ने लगा। उस लिफाफे पर मन्मथनाथ मजूमदार आई० सी० एस० का पता लिखा हुआ था। लिखावट स्त्री के हाथ की थी उस लिफाफे पर टिकट तो लगे हुए थे किन्तु डाकखाने की मुहर नहीं थी। तत्क्षण ही मैं समझ गया कि इस लिफाफे के अन्दर के कागज पर किसी स्त्री के बिछोह की करुण कथा अंकित है। पृथ्वी के हृदय में छिपी हुए वस्तुओं के इतिहास को जानना ही मेरा काम है। मेरे खोजने वाले हाथों ने लिफाफे का रहस्य जानना चाहा।

अब मैं अपने हृदय के इस रहस्य के सम्बन्ध में सोच रहा हूँ। मैं इस विस्मय को ही सोच रहा था, क्योंकि इस बार मैं इससे पूरी तरह परिचित हो गया था, कि हृदय की किसी चंचलता के कारण मानव भावना

कैसा रूप धारण कर लेती है! नगरों की रंगीन सड़कों पर मैं व्यवसाय का ही लक्ष्य लेकर निकला था, किन्तु नगर के जीवन में जो एक रहस्य छिपा हुआ है उसको प्रत्यक्ष रूप में मैंने आज ही देखा था। इसके अतिरिक्त प्रकृति के अञ्चल में अवस्थित घने जंगलों में भी एक साम्राज्य है, जहाँ पर मानव हृदय की प्रतिपल मन्त्रध्वनि होती रहती है तथा जहाँ पर पेड़ पौधों का निशब्द षड्यन्त्र होता रहता है। दिन के साम्राज्य में उनका उच्च स्वर निनादित होता रहता है, तथा रात्रि में उनकी मन्त्र ध्वनि गूँजती रहती है। जहाँ पर मानव हृदय में रह रह कर एक अपूर्व गुञ्जन होता रहता है और आन्तरिक भाव बुद्धि को प्रभावित करते रहते हैं।

जिआलोजी की प्रेरणा से मैं वन की वस्तुओं का निरीक्षण कर रहा था, पत्थरों में रेडियम के कण खोज रहा था कि शायद वे पत्थरों की कठोर छाती से निकाले जा सकें। किन्तु मेरी कल्पना में मुझे शाल वृक्षों की छाया में बैठी हुई अचिरा दिखलाई पड़ी। निसन्देह ही मैंने भारतीय नारी को अनेकों बार देखा है; किन्तु मुझे कभी किसी भारतीय नारी को इस भाँति एकान्त में देखने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। स्वयं अपने हाथों से वनस्थली ने उस नारी की श्यामलता तथा कोमलता में अपनी प्रशंसात्मक वाणी मिला दी है। मैंने विदेशी सुन्दरियाँ भी अनेकों देखी हैं और अच्छी भी लगी हैं, किन्तु भारतीय सुन्दरी को मैंने यहाँ जहाँ पर उसे सम्पूर्ण रूप से निहारा जा सकता था, पहले पहल देखा था। किन्तु इस निर्जन वन में वह अपरिचिता मुझे पूर्ण रूप से परिचित सी नहीं लगी।

उसे देख कर मैं यह नहीं पहिचान सका कि चोटी हिलाती हुई वह डायोसिन में पढ़ने जाती है, या बैथून कालिज से अभी अभी डिग्री प्राप्त कर वह आई है, अथवा वह टेनिस खेलने वाली ऊँची टीम के सम्मुख चाय बिस्कुट परोसती है। बहुत दिन हुए, अपने बचपन में मैंने दास ठाकुर तथा राय वसु के गाने सुने थे और अब तो मुझे वे स्मरण भी कतई नहीं

थे। आज वे गीत न तो रेडियो पर ही सुनाये जाते हैं और न ग्रामोफोन में ही गाये जाते हैं—मुझे आज यह भास हुआ कि अचिरा के सौन्दर्य की कथा उन गीतों की रागनी में ही छिपी हुई है "सीख ! याद रहेगी विरह व्यथा !" गीत में जो वेदना, जो टीस है सम्पूर्ण वेग से आज वह मेरे सम्मुख खड़ी जान पड़ी। मैंने भूगर्भ विज्ञान में पढ़ा है कि किस प्रकार भूकम्प आते ही भूगर्भ में छिपी सामग्री ऊपर आजाती है। आज मेरे हृदय में भी एक भूकम्प आया जिसके कारण मेरे हृदय की वस्तु अंधकार से आलोक में आ गई। कठोर वैज्ञानिक नवीन माधव के हृदय में ऐसी बातें आने की कभी भी सम्भावना नहीं थी।

यह बात मैं आज समझ सका हूँ सूर्य ढलने के पूर्व उस मार्ग से जब मैं नित्य प्रति घर लौटता था तब वह मेरी ओर देखा करती थी, किन्तु मैं उसकी ओर से अपनी आँखें फेर लेता था जैसे उससे मुझे कोई सम्बन्ध ही नहीं हो। विदेश से लौटने पर मुझे अपनी सुन्दरता पर कुछ गर्व हो गया है। विदेशी सुन्दरियों के मुख से अपनी सुन्दरता के विषय में कानाफूसी सुनने का मुझे अभ्यास हो गया था, किन्तु विलायत से लौटने के पश्चात् मैंने अपने अनेक मित्रों से सुना है 'बंगाली युवतियाँ' ऐसे ही पुरुषों को ढूढ़ती हैं जिनकी मुखाकृति उनसे मिलती जुलती हुई हो। बंगाली में एक कहावत है 'कार्तिक का चेहरा'। बंगाली लोग कार्तिक भले ही हो जाँय किन्तु हिन्दी कवि देव सेनापति नहीं बन सकते। मैंने पेरिस में एक अपनी स्त्री मित्र से सुना था 'अंग्रेजों का सफेद रंग अच्छा नहीं वरन् वह तो रङ्ग का अभाव है। नीलाकाश पर जो छाया के रंग होते हैं हम उन्हें पसन्द करते हैं, क्योंकि देखने में वे सुन्दर प्रतीत होते हैं।' किन्तु यह बात बंगाली स्त्रियों के लिये लागू नहीं होती। मेरे हृदय में इस प्रकार की बातें कभी नहीं उठीं थीं। किन्तु इधर कुछ दिनों से मेरे हृदय को ये ही बातें घेरे रहती हैं। मेरा रंग धूप में पका हुआ गेहुँआ है, शरीर लम्बा, पतला,

तथा बलिष्ठ है, चेष्टा सुन्दर और नाक आदि सब दृष्टि से अच्छा मालूम पड़ता है। यह मैं नहीं किन्तु अन्य लोग कहा करते हैं। विलायत में एक कलाकार ने मेरी पत्थर की मूर्ति बनानी चाही, किन्तु मेरे पास समय अधिक नहीं था। अतः वह बना न सका। बंगालियों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता इसलिये उनकी माँ की ही भाँति मैं भी उन्हें मोम का बालक समझता हूँ। मेरे हृदय में यह बातें आ आकर मुझे क्रोधित बना रहीं थीं। मैं अपनी कल्पना में अचिरा से लड़ रहा था। तथा मन ही मन उससे कह रहा था 'तुम जिसे सुन्दर मान बैठी हो वह तो नष्ट होने वाला देव है। वह तुम्हारी स्तुति तो सुनता है किन्तु उस ओर ध्यान नहीं देता।' तथा यह भी कहा 'आज तुम मेरे विवाह की इच्छा को पानी भरे मेघों की भांति मिटा दोगी।' एक दिन अचानक ही मैं अपने इस स्वभाव पर हँस पड़ा था।

इधर मेरे हृदय में विज्ञान के आविष्कार करने की युक्तियाँ कार्य कर रहीं थीं। मैं अपने मन में यह सोच रहा था कि वह मेरे आने जाने के मार्ग में नित्य प्रति आँखें पसारे क्यों बैठी रहती है। यदि वह एकान्त में ही बैठना चाहती है तो किसी अन्य स्थान पर जाकर बैठ सकती थी। प्रारम्भ में तो मैंने उसे कनखियों से ही देखा था। इधर कभी कभी उससे मेरी आँखें भी मिलती हैं किन्तु स्पष्ट रूप से जी भर के कभी आँखें चार चार नहीं हुईं।

इस परीक्षा से भी बढ़कर मेरी एक और परीक्षा हो चुकी है। इससे पहिले मैं अपना पत्थर मिट्टी का काम करके उस झुर मुट के मार्ग से एक बार ही घर लौटा था। किन्तु अब फिर वहाँ होकर कभी कभी मोटर गाड़ियाँ भी निकल जातीं हैं। और अचिरा भी भली भाँति जानती है कि यह बात भूगर्भ विद्या से सम्बन्धित नहीं है। यह देखकर, कि वह याता यात उस नारी को वहाँ से हटने को विवश नहीं करता, मेरा साहस बढ़ गया। कई बार मैंने पीछे फिर कर देखा है कि मेरे निकल जाने के बाद भी अचिरा मेरी

ही ओर देख रही है और पलट कर जब मैंने अपनी दृष्टि उस पर डाली तो उसने अपने नेत्र नीचे कर डायरी पर जमा दिये हैं। यह देखकर मुझे सन्देह हुआ कि डायरी लिखने की उसकी गति में अब वह वेग नहीं है। मेरे वैज्ञानिक हृदय में अब उसके मनो-विज्ञान की बातें आने लगीं हैं। मै समझ गया कि किसी व्यक्ति के साथ शादी करने के लिये वह निर्जन वन में तपस्या कर रही है, जिसका नाम भवतोष था; जो कि विलायत से लौट कर छपरा में सहायक मेजिस्ट्रेटी कर रहा था। पहिले इन दोनों में बहुत गम्भीर प्रेम था। किन्तु इस व्यक्ति के नौकरी करने से इन दोनों के प्रेम में अनायास ही कोई तूफान आ गया है। मेरे मन में पता लगाने की इच्छा हुई कि बात क्या है। मुझे इस बात का पता लगाने में कोई अड़चन नहीं हुई, क्योंकि पटना विश्वविद्यालय में मेरे साथ पढ़ा हुआ मेरा एक साथी है बंकिम।

मैंने उसे एक पत्र डाला। उसमें लिखा 'बिहार सिविल सर्विस में कोई भवतोष मजूमदार हैं। उनके सम्बन्ध में लड़की वालों ने लोगों से सुना है कि वे भले आदमी हैं। मेरे एक मित्र ने कहा है कि उनकी कन्या की शादी उनसे करवाने का मैं प्रयत्न करूँ। वे शादी कर लेंगे अथवा नहीं, पूरी बातें मुझे लिखो। क्या वह इस सम्बन्ध को स्वीकार कर लेंगे।'

मेरे मित्र का उत्तर आया 'वह शादी नहीं करेंगे। यदि उनके सम्बन्ध में जानना चाहते हो तो सुनो

'अपने कालिज जीवन में मै डाक्टर अनिल कुमार सरकार का शिष्य था। 'अ' से आरम्भ होने वाले बहुत से अंकुर उनके नाम के प्रारम्भ में जुड़े हुए थे। जितने ही वे उच्च कोटि के विद्वान थे, बालकों के समान उतने ही सरल। उनकी पुत्री अति सुन्दर थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उनकी वन्दना से प्रसन्न होकर सरस्वती ने उनको विद्या ही नहीं दी वरन् पुत्री के रूप उस घर में अपना अवतार भी लिया था। भवतोष उनके घर में जाने लगा। उसकी बुद्धि तीव्र थी किन्तु बेकार की बातें बहुत करता

रहता था। उसकी तीव्रता देखकर पहिले तो डाक्टर साहब उस पर प्रसन्न हुए किन्तु बाद में उस पर उनकी पुत्री मुग्ध हो गई। उन दोनों का आपस में इतना बैठना हम लोगों को अखरने लगा। सगाई का कार्य सम्पन्न हो चुका था बस देर इतनी सी थी कि भवतोष विलायत जाकर वहाँ से सिविल सर्विस की परीक्षा पास कर आये। विलायत भेजने का उसका व्यय डाक्टर साहब को ही सहन करना पड़ा। भवतोष को ठण्ड बहुत सताती थी। हम लोगों ने सुबह शाम भगवान से प्रार्थना की कि उसको निमोनियाँ हो जाय और वह मर जाय। वह मरा तो नहीं किन्तु परीक्षा पास करली। परीक्षा पास करने के पश्चात उसने भारत सरकार के एक उच्च पदस्थ अधिकारी की पुत्री से विवाह कर लिया। लज्जा तथा दुख के कारण डाक्टर साहब अपनी कन्या को लेकर कहीं चले गये—आज तक उनका पता नहीं कि कहाँ गये।'

पत्र मैंने पूरा पढ़ा तथा दृढ़ निश्चय किया कि इस लड़की का उद्धार मुझे करना ही है चाहे मुझे कितना ही लज्जित होना या दुख उठाना पड़े।

यह विचारते ही अजिरा से बातचीत करने को मेरा हृदय व्याकुल हो उठा। यदि मैं विज्ञान वेत्ता न होकर साहित्य रसिक होता अथवा पूर्वी बंगाल का न होकर आधुनिक फैशन परस्त पश्चिमी बंगाल का होता तो अब तक कभी चुप न रहता। किन्तु मैं बंगाली युवती से डरता हूँ शायद उसे पहिचानता नहीं इसीलिये। मेरी यह धारणा थी कि हिन्दू नारी अन्य पुरुषों के लिये एक दुर्गम मार्ग है। यदि मैं बेकार ही उससे बातें करने जाऊँ तो उसका पवित्र रक्त अपवित्र हो जायगा। संस्कार ऐसा ही अन्धा होता है। यहाँ पर कार्य आरम्भ करने से पूर्व मैं अपना कुछ समय कलकत्ते में व्यतीत कर ही आया था तथा अपने रिश्तेदारों के यहाँ पर आधुनिक युवतिओं को सिनेमा के रंग ढंग में डूबा हुआ देख आया था, खैर जाने दो

इन बातों में रखा भी क्या है। किन्तु अचिरा को देख कर मुझे ऐसा भास हुआ कि वह आधुनिक युवतियों की भांति चलचित्र के संसार की नायिका नहीं है। आधुनिक युग में वह जन्मी अवश्य है किन्तु इस युग का उस पर कोई प्रभाव नहीं—वह आत्म मर्यादा से अनुप्राणित है तथा पर पुरुष के स्पर्श से भी डरती है। मन ही मन में सोचता रहा कि बातें कैसे प्रारम्भ की जावें।

इसी बीच में निकटवर्ती स्थानों पर कई डकैतियाँ पड़ चुकी थीं। मैंने सोचा कि अचिरा से इसी सम्बन्ध में बातें प्रारम्भ की जावें कि 'यदि आप कहें तो राजा से कहकर आपके पहरे का प्रबन्ध करा दिया जाय।' यदि वह आधुनिक युग की युवती होती तो इस प्रकार की बातों को चाप-लूसी समझती और अपनी गर्दन टेढ़ी करके कहती 'यह तो मेरे सोचने की बात है, मैं स्वयं इनका प्रबन्ध कर लूँगी।' किन्तु यह बंगाली युवती मेरी बात को किस रूप में समझेगी इसका मुझे कोई अनुभव नहीं था। बहुत समय से बाहर रहने के कारण मेरे संस्कार विदेशीपन में मिल गये हैं।

भगवान भास्कर अस्ताचल में प्रवेश करने वाले हैं। अब अचिरा के घर लौटने का समय हो गया था। क्या उसके नाना उसको लेने जायेंगे। इतने में मैंने क्या देखा कि एक बदमाश अचिरा के हाथों से उसका बेग तथा डायरी छीन कर भागा जा रहा है। तत्क्षण ही पेड़ों की ओट से निकल कर मैं बोला "आप डरिये मत।" और झटपट उस बदमाश के कन्धे पकड़ लिये। बदमाश बेग और डायरी छोड़कर भाग गया। मैंने वह सामान अचिरा को लौटा दिया।

अचिरा बोली "मेरे भाग्य से आप यहाँ......"

मैं बोला "मेरी बात मत कहिये; मेरे ही भाग्य से वह बदमाश यहाँ आया था।"

"इसका मतलब?" अचिरा ने पूछा।

"इसका अर्थ यही है कि उसके ही कारण मेरी और आपकी आज बातें हो सकी हैं। इतने दिनों से मैं यह निश्चय ही नहीं कर सका कि आपसे बातचीत कैसे प्रारम्भ की जाये।"

"किन्तु वह तो डाकू था?"

"नहीं वह डाकू नहीं था। वह था मेरा बन्दूकदाज़।"

अपनी कत्थई रंग की साड़ी में मुँह लगा कर अचिरा जोर से हँस पड़ी। कितना माधुर्य था उसकी हँसी में—प्रतीत ऐसा होता था मानो कि कोई उच्च संगीतज्ञ अपनी बाँसुरी पर सुरीले राग निकाल रहा हो।

जब उसकी हँसी रुक गई तब वह बोली "यदि यह बात सत्य होती तो कितना अच्छा होता।"

"किन्तु होता किसके लिये अच्छा?"

"जिसके सामान पर डाका पड़ा था, उसके लिये।" अचिरा ने कहा।

"किन्तु इसके बाद, जिसने आपको बचाया उस का क्या होता?"

अचिरा बोली "जिसने बचाया है उसे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। उसने तो केवल इतना ही चाहा कि उसे बातचीत का प्रथम अवसर मिले, जो उसे प्राप्त हो ही गया।"

"यह गणित की संख्यायें अकस्मात् समाप्त तो नहीं होंगी?"

"समाप्त क्यों होंगी?" अचिरा ने कहा।

"अच्छा यदि मेरे स्थान पर आप होतीं तो मुझसे कौन सी बात पहिले करतीं?"

"यदि मैं होती तो यही कहती कि आप इस जंगल में बच्चों की भांति कंकड़ पत्थरों से क्यों खेला करते हैं? क्या अभी आपका बचपन नहीं गया है?"

"तो फिर आपने अभी तक कहा क्यों नहीं ?"

"आपसे कहने में डर लगता था।" अचिरा ने कहा।

"डर लगता था ? मुझसे ?"

"आप बहुत बड़े आदमी हैं, यह मैं अपने नानाजी से सुन चुकी हूँ, आपके लेख उन्होंने विलायत के अखबारों में पढ़े हैं। जो कुछ भी वह कहते हैं मुझे समझाने की कोशिश करते हैं।"

"क्या उन्होंने तुमको मेरा लेख समझाया था ?"

"हाँ उन्होंने समझाने का प्रयत्न तो किया था, किन्तु उसमें लैटिन नाम इतने थे कि समझ में ही नहीं आता था। इसीलिये मैंने नानाजी से हाथ जोड़ कर कहा था कि इसे रहने दीजिये। इससे तो अच्छा है कि मैं आपकी कोथण्टम थ्योरी की किताब यहाँ ले आऊँ तो कुछ समझ में तो आ ही जायगा।" अचिरा ने कहा।

"शायद आप उसको समझ जाती हैं ?"

"समझती तो कुछ भी नहीं, किन्तु मेरे नानाजी में ऐसी प्रतिभा है कि वह सभी कुछ समझ जाते हैं। तथा मैं उनकी इस धारणा को तोड़ना नहीं चाहती। उनकी एक धारणा और है स्त्रियों की बुद्धि पुरुषों से अधिक तीव्र होती है। इसीलिये मुझे डर लग रहा है कि इतनी देर हो जाने की व्याख्या मुझे नानजी से अवश्य सुननी पड़ेगी। वास्तविक बात यह है कि लड़कियों पर उनकी करुणा अधिक रहती है। जब मेरी नानी जीवित थीं तब कोई भी गम्भीर बात छिड़ते ही वह नानाजी का मुँह बन्द कर देती थीं। इससे स्त्रियों की तीक्ष्ण बुद्धि कहाँ तक पहुंच सकती है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण नानी से उन्हें नहीं मिला। मैं नानाजी को हताश नहीं कर सकती। सुना बहुत है, समझा नहीं है और भी बहुत सुनूँगी और समझूँगी भी कुछ नहीं।"

अचिरा के दोनों नेत्र कौतूहल भरे स्नेह से भर गये। मेरा मन यही चाहने लगा कि बातें चिरकाल तक चलती रहें। हृदय कालिका कुम्हलाई जा रही थी। सन्ध्या सुन्दरी अपने दीप जलाकर शाम वन के ऊपर प्रकाश फैला रही थी। सन्थालिनें ईंधन एकत्रित कर अपने अपने घर लौट रही थीं; दूर से ही उनके गीतों की मधुर ध्वनि उस गो धूलि वेला में सुनाई दे रही थी।

इतने में ही कहीं से किसी के पुकारने की आवाज आई "अचि! तुम कहाँ हो। अँधेरा हो चला है। आज कल समय ठीक नहीं है।"

"बिल्कुल अच्छा नहीं, नानाजी। इसीलिये आज मैंने एक अपना रक्षक नियुक्त किया है।"

डाक्टर साहब के आते ही उनके पाँव छू कर मैंने उनको प्रणाम किया; वे अत्यन्त विस्मित हो उठे। मैंने अपना परिचय दिया" मेरा नाम नील माधव सेन गुप्त है।"

वृद्ध अध्यापक का मुख प्रसन्नता से खिल उठा, वह बोले "अच्छा आप ही हैं डाक्टर सेन गुप्त?' आप तो अभी युवक ही हैं।"

मैंने कहा "जी हाँ! मैं अभी युवक ही हूँ। मेरी आयु छत्तीस से अधिक नहीं है।"

पहिले ही की भाँति अचिरा इस बार फिर मधुर कण्ठ से हँस उठी, तथा उसने मेरे हृदय की वीणा के तारों को अपने मधुर हास की मधुरिमा से और भी झंकृत कर दिया। वह बोली "मेरे नानाजी की दृष्टि में इस संसार के सभी लोग बालक ही हैं तथा वह स्वयं हैं उन सबके अग्रवाल"

वृद्ध डाक्टर साहब ने कहा " अग्रवाल! तुमने इस नये शब्द का आविष्कार कहाँ से कर डाला?"

अचिरा बोली "आपका एक प्रिय छात्र था कुन्दन लाल अग्रवाल।

मेरे लिये वह बोतलों में भर भर कर आम की चटनी लाया करता था। मैंने एक बार उससे पूछा था कि अग्रवाल शब्द का अर्थ क्या है। उसने मुझे इस शब्द का अर्थ बतलाया कि अग्रवाल वह है जो सब मनुष्यों से आगे रहे।''

डाक्टर साहब ने कहा "डाक्टर सेन गुप्ता हमारा परिचय तो अब आपसे ही हो गया। अब आपको हमारे यहाँ अवश्य आना होगा।''

बीच में ही बात काट कर अचिरा बोली "नाना जी। इनको कहकर बुलाने की आवश्यकता नहीं; यह तो स्वयं ही आना चाहते हैं। इन्होंने मुझसे यह सुन लिया है कि आप देश,काल की समस्याओं की ग्रुत्थियों को बड़ी सुगमता से सुलझा देते हैं।"

मैंने मन ही मन कहा "यह क्या हरकत है ! अचिरा ने तो सीमोल्लंघन कर दिया।"

डाक्टर साहब ने उत्साह भरे कण्ठ से कहा "क्या आप मुझे अधिक समय व्यतीत होने के सम्बन्ध में कुछ······।"

उनकी यह बात सुनकर मैं घबड़ा गया और बोल उठा "जी नहीं! मैं इस सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता मुझे आप समझायेंगे भी तो आपका समय ही व्यर्थ नष्ट होगा।"

डाक्टर साहब कुछ तेज हो बोल उठे "समय।' यहाँ जंगल में समय की क्या कमी है। अच्छा एक काम कीजिये कि इस समय आप हमारे यहाँ चलकर भोजन कीजियेगा।"

मैं प्रसन्न होकर कहने ही वाला था 'जी हाँ अच्छा।' कि बीच में ही अचिरा बोल उठी " नाना जी। क्या आप को मैं यूँ ही बेकार कहती हूँ कि आप बच्चे हैं। जब देखो तब आप लोगों को निमंत्रण देकर मुझे परेशानी में डाल देते हैं। यहाँ, इस जंगल में 'फरपों' की दूकान कहाँ मिलेगी और यह लोग ठहरे विलायती ढंग से खाना खाने वाले। आप क्यों

अपनी दोहती को बदनाम कराना चाहते हैं। कमसेकम मछली और भेड़ के माँस की व्यवस्था तो करनी ही करनी होगी।"

"अच्छा तो जाने दो। मुझे बतलाइये कि आपको सुविधा कब रहेगी।' "

मैंने कहा "सुविधा का तो कोई प्रश्न ही नहीं फिर वह भी भोजन के लिये ; किन्तु मैं यह नहीं चाहता कि अचिरादेवी को परेशानी हो। मुझे इस भयङ्कर जंगल में पहाड़ एवं गुफाओं में जगह जगह घूमना पड़ता है इसीलिये मैं अपने साथ एक थैले में चूड़ा, केले, टमाटर, चने का कच्चा साग तथा मूंगफली भी रखा करता हूँ। मैं अपने साथ में सामान ले आऊँगा, बस अचिरा देवी मुझे हाथ से मिलाकर दही और चूड़ा खिला देंगी। यदि आप इस बात पर राजी हों तो कोई बात नहीं मैं कल आ जाऊँगा।"

अचिरा ने कहा "नहीं नानाजी ! इन सब लोगों का विश्वास मत करना। आपने बंगाल के एक मासिक पत्र में लेख लिखा था 'बंगाल के खाद्य में विटामिन का प्रभाव'। उसे इन्होंने पढ़ा था इसी से आपको प्रसन्न करने के लिये फलों के नाम गिना दिये हैं।"

मन ही मन मैंने सोचा 'अच्छी मुसीबत में जान फँसी।' मेरे लिये किसी भी डाक्टर का पत्रिकाओं में विटामिन सम्बन्धी लेख पढ़ना संभव नहीं है। लेकिन यह कहूँ तो कैसे कहूँ, विशेषतया तब जब उन्होंने मुझसे पूछा "क्या आपने मेरा लेख पढ़ा था ?"

मैंने उत्तर दिया "मैंने उसे पढ़ा अथवा नहीं किन्तु वास्तविक बात यह हुई है कि ···············"

"वास्तव में बात यह है कि यदि इन्हें भोजन कल कराया जाय तो इनकी थाली में मछली, माँस, फल इत्यादि सब वस्तुएं खाने को प्राप्त होंगी। इसीलिये यह टमाटर का नाम बारम्बार ले रहे हैं। इनके शरीर की

ओर देखो, कोई कह सकता है कि केवल शाकाहार से बना होगा? नाना जी! आप सब पर विश्वास कर लेते हैं यहाँ तक कि मुझ पर भी। इसी-लिए हँसी में आपसे कुछ कहने की हिम्मत नहीं पड़ती।"

हम लोग बातें करते हुए धीरे २ उनके घर की ओर चले जा रहे थे। इतने में अचिरा ने कहा "अब आप अपने बँगले को जाइये।"

मैंने कहा—"सोचा था कि आप लोगों को आपके घर तक ही पहुंचा दूँ।"

"हमारा घर अभी यों ही अस्त व्यस्त पड़ा हुआ है फिर आप यही कहेंगे कि बङ्गाली स्त्रियों को घर ठीक से रखना नहीं आता है। मैं उसे कल अच्छी तरह सँवारूँगी जैसे किसी मेम का घर हो।"

डाक्टर साहब ने कहा—"डाक्टर सेन गुप्त! आप इसके कहने पर विचार मत कीजिये। यह बहुत बातें करती है, इसका स्वभाव ही ऐसा हो गया है। इस वन प्रान्तर की शून्यता में यह अपनी वेनु की बातों से मेरा हृदय बहलाये रहती है। यहीं आकर इसका स्वभाव ऐसा हो गया है। जब यह चुप रहती है तब मेरे घर, मेरे हृदय में सन्नाटा छा जाता है और यह इस बात को जानती है। मुझे भय लगता है कि कहीं इसे कोई गलत न समझ बैठे।"

अपने वृद्ध नाना से लिपटकर अचिरा कहने लगी—"नानाजी! मुझे सब बातें समझने दो, मैं अत्यन्त निन्दा का पात्र नहीं बनना चाहती, नहीं तो यहाँ पर रहने में कोई आनन्द नहीं रह जायगा।"

अध्यापक ने गर्व से कहा—"सेनगुप्त! तुम जानते हो मेरी अचिरा बातें करने का ढङ्ग जानती है। मैंने ऐसी लड़की कहीं नहीं देखी।"

सहसा अचिरा बोल उठी—"आपने ऐसी लड़की कहीं नहीं देखी और मैंने इतने अच्छे नानाजी।"

मैंने कहा—"गुरुदेव ! आज आपको विदा होने से पूर्व मुझे एक वचन देना होगा।"

"अच्छी बात है।"

"जितनी भी बार आप मुझे 'आप' शब्द से सम्बोधित करते हैं उतनी ही बार मुझे लज्जा का अनुभव होता है। यदि आप मुझे 'तुम' कहकर सम्बोधित करें तो वह मेरे लिये स्नेह तथा सम्मान वर्धक होगा। यदि आप अपने घर में मुझे 'तुम' कहेंगे तो आपकी दुहिता भी मेरी सहायता करेगी।"

"आपने तो हद कर दी। मैं एक साधारण देहाती लड़की आपकी महानता तक किस प्रकार पहुंच सकती हूँ। मेरा कहना है कि कुछ समय और व्यतीत होने दीजिये। यदि मैं आपके डिगरीधारी स्वरूप को भूल सकी तो सब कुछ सम्भव हो सकता है, नानाजी की बात अलग है। अभी प्रारम्भ करिये ना—नानाजी बोलिए ना—'तुम कल भोजन करने यहाँ आना। अचि यदि मछली के झोल में नमक अधिक भी डाल दे तो सहन कर लेना और कहना कि बड़ा अच्छा बना है, अभी और लूँगा।"

अध्यापक ने मेरे कंधे पर हाथ रख, मुझसे स्नेह पूर्वक कहा—"यदि कुछ समय पूर्व मेरी अचि को देखते तो मालूम हो जाता कि यह कितने लज्जाशील स्वभाव की है। जब यह बात करना प्रारम्भ करती है तो कुछ अधिकता से करने लगती है।"

"देखिये ना डा० सेनगुप्त ! नानाजी मुझ पर कैसा मधुर शासन कर रहे हैं। यह मुझसे अनायास ही कह सकते थे कि मैं मुँहजोर हूँ और मेरी यह बातूनी प्रकृति सहन करने योग्य नहीं। लेकिन आप मेरी सहायता कीजियेगा। कैसे करेंगे, क्या कहेंगे ? कहिये ना !"

"आपके सामने नहीं कहूँगा।"

"अधिक कठोर होगा ?"

"आप मेरे मन की बात समझती हैं।"

"तब फिर रहने दीजिये। अब अपने घर जाइये।"

"एक बात और है। कल आपके यहाँ मेरे लिए भोजन भी होगा और नवीन नामकरण भी। कल से मेरे नाम में से 'डाक्टर' और 'सेनगुप्त' लुप्त हो जायगा ठीक वैसे ही जैसे सूर्य के सामने जाने से धूम्रकेतू की पूँछ उड़ जाती है।"

"तब फिर इसे आप 'नाम परिवर्तन' कहिए 'नाम करण' क्यों कहते हैं?"

"अच्छा तो यही सही।"

मेरा पहिला दिन इन्हीं बातों में समाप्त हो गया।

कितना ओजस्वी चेहरा है वृद्ध डाक्टर साहब का और मूर्ति कितनी सौम्य है। उनके नेत्रों को देखने से प्रतीत होता है मानो कि वह किसी को आशीर्वाद दे रहे हैं। उनके हाथ में एक चमकदार छड़ी, कन्धे पर चुनी श्वेत चादर, शरीर पर चुनी हुई धोती तथा टसर का कुरता है। माथे के बाल श्वेत हो चुके हैं किन्तु वे कंघा अवश्य करते हैं। देखते ही स्पष्टतया ज्ञात हो जाता है कि उनकी साज सज्जा में अचिरा का भी हाथ है तथा इस लड़की को ही प्रसन्न रखने के लिए इन्हें इतना परिश्रम करना पड़ता है।

अभी तक मैं जंगलों में वैज्ञानिक खोज ही कर रहा था, किन्तु अब मेरे हृदय में इन लोगों की ही खोज रहने लगी। मैं अध्यापक साहब का नाम अनिल कुमार सरकार ही रखना अधिक उचित समझता हूँ। वह कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के पुराने पी० एच० डी० हैं। कई माह पूर्व एक नगर के कालिज की अध्यक्षता छोड़कर वह इस जंगल में आगये हैं, तथा यहां स्टेट के एक बेकार बँगले की मरम्मत करवाकर उसमें ही रहने लगे

हैं। यह तो उनका थोड़ा सा परिचय के लिए बंकिम के पत्र का सहारा लेना चाहिये।

मेरी कहानी का प्रारम्भिक भाग समाप्त हो गया। छोटी कहानी के आदि अन्त में अन्तर अधिक नहीं रहता। बातों को बढ़ा–चढ़ाकर मैं उनके वास्तविक आनन्द को कम नहीं करूँगा।

संक्षेप में, मैं अचिरा के साथ अब बातचीतें कर सकता था। उस दिन हमारी पिकनिक 'तनिका' नदी के किनारे हरी भरी वनस्थली में हुई थी।

अचानक ही डाक्टर साहब मुझसे पूछ बैठे "नवीन! क्या तुम्हारा विवाह हो चुका है?"

प्रश्न का अर्थ इतना गम्भीर तथा स्पष्ट था कि यदि उस समय मेरे स्थान पर कोई अन्य होता तो बात को दबा जाता। मैंने उत्तर दिया— "नहीं! अभी तक तो नहीं हुआ है।"

बात कैसी भी क्यों न हो किन्तु अचिरा की दृष्टि से नहीं बच सकती। उसने कहा—"नानाजी! 'अभी तक तो नहीं' इनका यह संशयपूर्ण वाक्य कन्या पक्ष को दिलासा देने के लिये है। किन्तु इसका वास्तविक अर्थ कुछ भी नहीं है।"

"इसका कोई अर्थ नहीं, यह आपने कैसे निश्चय कर लिया?"

"यह समस्या गणित की है; किन्तु यह प्रश्न पेचीदा नहीं है। यह बात तो पहिले ही ज्ञात हो गई कि आप छत्तीस वर्ष के छोटे से बच्चे हैं। इस बीच में तो आपकी माताजी ने कम से कम पाँच सात वार तो कहा ही होगा 'बेटा! घर में अब तो बहू आनी चाहिये।' आपने उस बेचारी को उत्तर दिया होगा 'शादी करने से पहले धन कमाना चाहता हूँ।' वह बेचारी रो धोकर चुप हो गई होगी। इस बीच में आपने धन, तो खूब कमा लिया किन्तु शादी करके गले में फाँसी का फन्दा नहीं डाला। अन्तिम

समय, जब आपको राज दरबार से यह पद प्राप्त होगया तब फिर आपकी माताजी ने कहा होगा 'बेटा । अब तो विवाह करना ही होगा, मैं अब और कितने दिन की मेहमान हूँ ।' तब आपने कहा होगा 'मेरा जीवन और सन्यास एक से ही हैं मैं उसे भारत माता की सेवा में अर्पित करूँगा।' हताश होकर वे फिर आँखें पोंछ बैठी हैं। बतलाइये, आपके छत्तीस वर्ष के जीवन इतिहास को मैं बतलाने में सफल हुई या नहीं ।"

इस लड़की के साथ असावधानी से बातें करना खतरनाक है। कुछ दिन पूर्व मैं अचिरा से बातें कर रहा था। अचिरा ने प्रसङ्ग वश कहा था 'आप लोग हमारे देश की स्त्रियों को केवल घर गृहस्थी के काम के साथी के रूप में पाते हैं। किन्तु विलायत में जो विज्ञानी लोग हैं उन्हें तो अपनी जैसी स्त्रियाँ मिल जाती हैं, जैसे उदाहरण के लिये अध्यापक कुरी की पत्नी मेडम कुरी थीं। इस प्रकार की अपने देश में आप कोई स्त्री नहीं पा सकते।"

मुझे कैथरिन की बात याद आ गई। हम दोनों ने लंदन में एक साथ काम किया था। यहाँ तक कि मैंने और उसने रिसर्च की भी एक पुस्तक लिखी थी। अचिरा की यह बात मुझे असंदिग्ध रूप से स्वीकार करनी पड़ी।

यह सुनकर अचिरा बोली, 'फिर आपने इतनी योग्य लड़की से विवाह क्यों नहीं कर लिया।' क्या वह इसके लिये तैयार नहीं थी।'

मुझे मानना पड़ा "शादी का प्रस्ताव तो उन्होंने ही किया था।"

अचिरा ने कहा "तब उसे आपने क्यों नहीं स्वीकार किया।' "

"मेरा काम भारतवर्ष मे ही था और वह केवल विज्ञान का ही हो यह बात भी नहीं थी।"

"इसका अर्थ तो यही है कि प्रेम की सफलता आप जैसे साधकों के लिये कामना की वस्तु नहीं। स्त्री जीवन का मुख्य ध्येय व्यक्तिगत होता है

और आप लोगों का ठीक इससे विपरीत।" अचिरा ने कहा।

इसका उत्तर सहसा ही मेरे मस्तिष्क में नहीं आया। मुझे चुप होते देख अचिरा कहने लगी "शायद आप बंगला साहित्य नहीं पढ़ते। 'कच और देवयानी' नाम की एक कविता है। उसमें यही बात है, स्त्रियों का प्रण है 'पुरुषों को अपने बन्धन में बाँधना' और पुरुषों का है 'उनके बन्धन को तोड़ कर परलोक का मार्ग बनाना'। कच देवयानी के अनुरोध को त्याग घर से निकल पड़ा था, और आप माँ का अनुनय न मानकर निकल पड़े हैं। बात एक ही है। स्त्री पुरुष के चिरकाल से चलते चले आये संघर्ष में आप विजयी हुए हैं। आपके पौरुष को कोटिशः धन्यवाद है। स्त्री हृदय को रोने दीजिये, उस क्रन्दन का भोग नैवेद्य रूप में अपनी साधन की पूजा में ग्रहण कीजिये। देवताओं पर लोग भोग चढ़ाते हैं, किन्तु देवता किसी पर रीझता ही नहीं है।"

अध्यापक इस वार्तालाप के भाव को नहीं समझे। गर्व के साथ कहने लगे "अचि के मुख से गम्भीर सत्य बिना किसी प्रयत्न के ऐसे सुन्दर ढङ्ग से निकलता है कि बाहर के लोग सुनकर यही समझेंगे कि......"

उनको बार बार यही डर लगा रहता है कि लोग उनकी नातिनी को ग़लत न समझ बैठें।

अचिरा ने कहा "नाना जी! आप बाहर वालों की चिन्ता मत कीजिये। इनसे स्त्रियों की प्रशंसा सही नहीं जाती और उनकी कुशलता भी इन्हें अखर जाती है। आप मुझे सही समझिये, मेरे लिये इतना ही पर्याप्त है।"

हँसी हँसी में अचिरा बहुत बड़ी बात कह जाती है, किन्तु आज जो गम्भीरता उसने धारण की है वह देखते ही बनती है। मैंने भी यह समझ लिया कि जिस उच्च अधिकारी की लड़की को भवतोष ब्याह कर लाया उसका भी लक्ष्य ऊँचा तथा निस्वार्थ है। उसने अचिरा को यही समझाया होगा। देश के काम में लगाने के लिये शक्ति वह ब्रिटिश शासन से ही अर्जन कर

सकेगा। किन्तु अचिरा को धोका देना इतना आसान नहीं है, वह भवतोष की बातों में नहीं आई और इसका प्रमाण है लिफाफे के फटे हुए दो टुकड़े।

अचिरा ने पुनः कहा "जानते हो। देवयानी ने कच को क्या श्राप दिया।' "

"नहीं तो।"

"देवयानी ने कहा था 'तुम अपने ज्ञान के फल को स्वयं नहीं भोग सकोगे, वह तुम्हें दूसरे को दान करना पड़ेगा।' मुझे यह बात ठीक नहीं लगी। यदि आज कोई इस प्रकार का श्राप योरुप को दे देता तो वह जी जाता। विश्व की वस्तुओं की भाँति ही काम में लाने से ही वे लोग लोभ की मार खा खा कर मर रहे हैं। नाना जी! बतलाइये, यह ठीक है या नहीं?"

"यह नितान्त सत्य है। किन्तु आश्चर्य है कि तुमने यह बात कैसे सोची!"

"इसको सोचने की योग्यता मुझ में नहीं है। आप से ही ऐसी बातें कितनी ही बार सुन चुकी हूँ। आप में एक महान गुण है; आप भगवान शंकर हैं। कब क्या बात कह जाते है तथा कहकर तुरन्त ही उसे भूल भी जाते हैं। और तब चोरी किये हुए सामान को अपनी छाप लगा कर चलाने में किसी को कैसा भी भय नहीं रह जाता।"

मैंने कहा "चोरी की विद्या भी एक ऊँची विद्या है। विद्या के क्षेत्र तथा राष्ट्र में बड़े बड़े चोर हैं। असल में कच्चे चोर वही हैं जो चोरी करने से पहिले ही पकड़ लिये जाते हैं।"

अचिरा ने कहा "नानाजी के कितने ही छात्रों ने इनकी कही हुई बातें नोट करके किताबें लिख डाली और अपना नाम कमा लिया बाद में उनकी पुस्तकें पढ़कर यह स्वयं उनकी प्रशंसा करते हैं। यह समझते ही नहीं कि अपनी प्रशंसा स्वयं अपने आप कर रहे हैं। मेरे भाग्य से, मुझे भी इस प्रकार की प्रशंसाएं प्रायः मिला ही करती हैं। नानाजी आप नवीन बाबू से

ही पूछ लीजिये ; इन्होंने भी स्वयं मेरी कही हुई बातों को अपनी डायरी में, जिसमें यह अपनी आवश्यक वैज्ञानिक बातें लिखते हैं, लिखना प्रारम्भ कर दिया है। नानाजी ! मुझे अभीतक स्मरण है, वैसे तो बहुत समय व्यतीत हो गया है, जब आप कालिज में पढ़ाते थे तब आपने ही मुझे 'कच-देवयानी' की कविता सुनाई थी। उस दिन से मैं पुरुष के उच्च गौरव को मानती आई हूँ' किन्तु इस गौरव को कभी मैंने अपने मुँह से स्वीकार नहीं किया है।"

"बेटी ! मैंने अपनी किसी बात में भी स्त्रियों का गौरव नहीं घटाया है।"

"आप स्त्रियों का गौरव घटायेंगे, आप तो स्त्रियों के अनन्य भक्त हैं। आपके मुख से नारी गान सुनकर मैं मन ही मन हँसा करती हूँ। नारी निर्लज्ज होकर सब स्वीकार कर लेती हैं और अपनी प्रशंसा सुनना तो उसका स्वभाव ही है।"

उस दिन की बातें कोरी हास्यवर्धक हों, यह बात नहीं थी। उसमें संघर्ष का संकेत था। अचिरा के स्वभाव की दशायें दो थीं और आश्रय स्थान भी दो थे। एक तो उसका घर और दूसरा था वह पाँच वृक्षों वाला झुरमुट। अचिरा के साथ जब मेरा सम्बन्ध घनिष्ट हो गया, तब मैंने सोचा कि उस निर्जन वनस्थली की गोद में हास्य करते करते अचिरा से अपने जीवन के संकट के सम्बन्ध में बात चीत करूँगा और किसी भी प्रकार उसे अन्तिम निर्णय की ओर ले जाऊँगा। किन्तु वहाँ परिस्थिति ही विपरीत थी। जबकि मेरा और अचिरा का प्रथम मिलन हुआ था उस समय मेरे मुख से बात प्रारम्भ करने को शब्द नहीं आये थे, उसी प्रकार यहाँ अचिरा भी इस प्रयत्न में थी कि प्रथम वार्तालाप प्रारम्भ किया जाय तो कैसे। मुझे उसकी बात के मूल रहस्य तक पहुँचने का कोई साधन नहीं मिला। उसकी हास्य ध्वनि, उसके घर पर, मुझको कुछ बात कहने को रोक देती है, तथा वन प्रान्त की गम्भीरता ने मुझको अपनी समस्त चंचलता की बातें करने से रोक दिया है। किसी किसी दिन जब इनके यहाँ चायपार्टी का निमंत्रण मिलता है

तब बात चीत करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। किन्तु उस समय अचिरा मुझे यह समझाती है कि मैं विपत्तियों के बहुत पास आ रहा हूँ। चायपार्टी के दिन तो उसके वाक्यों की कठोरता और भी बढ़ जाती है तथा उनसे बचने के लिये मुझे कोई स्थान नहीं मिलता। उन्हें सुनकर मेरा हृदय अशान्त हो जाता है, तथा मेरा विज्ञान कार्य नहीं होने पाता, जिसे देखकर मैं अन्दर ही अन्दर लज्जित हो जाता हूँ। मेरे रिसर्च विभाग में कुछ धनराशि स्वीकृत होने के सुझाव उपस्थित हो चुके हैं, किन्तु उसके समर्थन में रिपोर्ट अभी आधी भी नहीं लिखी गई है। इस सम्बन्ध में नित्य ही क्रान्ति की आलोचना सुनता चला आ रहा हूँ। इस बात को अचिरा भली भाँति जानती है कि इस विषय से मुझे कुछ प्राप्त नहीं होने का और यह मेरे ज्ञान से बाहर है, किन्तु फिर भी वह अपने नाना को उत्साहित करती रहती और मन ही मन हँसती भी रहती है। प्रस्तुत व्यवहार के सम्बन्ध में जितनी भी विपरीत उक्तियाँ हैं उनकी व्याख्या हो रही थी। इसकी आलोचना करते समय जो बात हृदय को बुरी लगती थी वह था अचिरा का कह कर चला जाना कि यह सब तर्क वह पहिले ही सुन चुकी है। मूर्ख की भाँति मैं बैठा रह जाता तथा मेरी दृष्टि बार बार द्वार की ओर जाती रहती। सुविधा की बात केवल यही थी कि नाना जी मुझसे यह कभी नहीं पूछते कि उनकी कही गई बातें मेरी समझ में आ रहीं थीं अथवा नहीं। उनका तो यही विश्वास है कि मैं सब बातें साफ साफ समझ रहा हूँ।

किन्तु मुझसे अब इस भाँति नहीं रहा जाता। कोई न कोई उचित अवसर आते ही मुझे मुख्य बात प्रारम्भ कर देती है। पिकनिक के दिन जब वृद्ध अध्यापक एक जीर्ण शीर्ण मन्दिर की सीढ़ियों पर बैठे हुए कैमिस्ट्री की एक नई प्रकाशित पुस्तक पढ़ रहे थे तब छोटे से आबनूस वृक्ष के नीचे बैठी हुई अचिरा कह उठी "इस निर्जन वन की वनस्थली में जो एक दुरूह प्राण की एक शक्ति है उससे मैं भयभीत होने लगी हूँ।"

मैंने कहा—"मुझे आश्चर्य है कि उस दिन भी मैंने यही बात नोट की थी।"

अचिरा अपनी बात कहती ही गई "धीरे २ पुरानी टूटी हुई दीवाल के हृदय में पीपल का वृक्ष निकल आता है, फिर वह दीवाल की जड़ तक को अपने फन्दे में फँसा लेता है, यह भी ठीक वैसा ही है। नानाजी के साथ ऐसी ही बातें हो रहीं थीं। उन्होंने कहा—'नगर से दूर रहते हुए मानव हृदय की प्रकृति की निर्जनता से ऊब जाता है।' मैंने पूछा 'फिर इस दशा में क्या करना चाहिये?' उन्होंने कहा 'मानव हृदय को हम अपने प्रभाव में ला सकते हैं। मेरी पुस्तकों को देखो।' नानाजी के लिये तो इस बात का कहना सरल है, किन्तु सब लोगों के लिए तो यह ठीक नहीं हो सकती। आपकी क्या राय है?"

मैंने कहा "अच्छा बतलाता हूँ, मेरी बात को आप ठीक तरह समझना मेरा विचार यह है कि ऐसे जंगल में मनुष्य को किसी ऐसे मनुष्य का साथ मिलना चाहिये जो भीतर बाहर से उसे प्रसन्न बनाये रखे। जब तक इस प्रकार का साथ नहीं मिलेगा तब तक मानव को वन की अन्ध शक्ति के सम्मुख अपना मस्तक सदैव झुकाना पड़ेगा। यदि आप साधारण कोटि की स्त्रियों की भाँति होतीं तो आदि से अन्त तक सत्य बात कहने में मुझे संकोच बना ही रहता है।"

अचिरा ने कहा—"आप निस्संकोच होकर कहिये, संकोच मत कीजिये।"

मैंने कहा—"मैं वैज्ञानिक हूँ, जो भी बात कहना चाहूँगा स्पष्ट रूप से ही कहूँगा। किसी समय आपने भावतोष से अत्यधिक प्रेम किया था। क्या आप उनसे अब भी उतना ही प्रेम करती हैं जितना पहिले करती थीं?"

"मान लीजिये उतना ही करती हूँ।"

"मैं ही आपके मन को उनसे विचलित कर सका हू।"

"हो सकता है। मेरे मन को केवल आपने ही विचलित नहीं किया है किन्तु उसमें वन प्रान्तर की अपूर्व भीषण शक्ति भी सम्मिलित है। इस-लिये मैं यहाँ से चले आने को श्रद्धा नहीं समझती, किन्तु उससे अपने को लज्जित पाती हूँ।"

"आप श्रद्धा क्यों नहीं करती ?"

"बहुत समय के प्रयास के द्वारा मानव अपने आदर्शों को स्थिर करता है, तथा अपने हृदय की शक्ति को, जोकि उसे किसी काम को करने से रोकती हैं विवश करता है आपके प्रति जो मेरा प्रेम है वह इसी का परिणाम है।"

"स्त्री होकर इस भाँति आप मेरे प्रेम का तिरस्कार कर रही हैं ?"

"यह तिरस्कार मैं स्त्री होने के कारण ही कर रही हूँ। प्रेम का आदर्श बहुत ऊँचा है और वह हमारे लिये पूज्यनीय है। उसी आदर्श का भाग है सतीत्व। सतीत्व एक आदर्श है। यह वस्तु जंगल की न होकर मानवता की है। यद्यपि मेरी साधना में अनेकों बाधाएँ उपस्थित हुई हैं, किन्तु फिर भी इस जंगल में चिरकाल से मैं उसी आदर्श की उपासना कर रही हूँ। यदि मैं अपने उस आदर्श की रक्षा न कर सकी तो मेरी समस्त आरा-धना ही समाप्त हो जायगी।"

"आप भवतोष पर श्रद्धा कर सकती हैं ?"

"नहीं।"

"उसके पास जा सकती हैं।"

"नहीं ! किन्तु मेरा और उनका पहिले जैसा प्रेम अब नहीं। अब मेरे लिए वह प्रेम व्यक्तिगत भी नहीं है। उस प्रेम के लिए अब किसी आधार की आवश्यकता नहीं।"

"मैं तुम्हारा मन्तव्य ठीक तरह से नहीं समझ पा रहा हूँ।"

"आप उसे ठीक तरह समझ भी नहीं सकेंगे। आप पुरुषों का धन है ज्ञान-जब वह उच्चतम शिखर पर पहुंच जाता है तब व्यक्तिगत नहीं रह जाता। स्त्रियों के पास केवल एक ही सम्पदा है और वह है उनका सरल हृदय। यदि नारी का सर्वस्व, वह सर्वस्व जो कुछ बाहरी संसार में है, देखने में, छूने में, भोग करने में आता है, लुट जाय तब भी उसके हृदय में प्रेम का उच्च आदर्श सदैव जीता जागता रहता है। तथा उनके प्रेम का आदर्श, जो कि व्यक्तिगत नहीं, बाकी बच जाता है।"

"देखिये! तर्क करने का अब समय नहीं रह गया है। आपने शायद यहाँ के समाचार पत्रों में देखा होगा कि मेरा यहाँ 'रिसर्च वर्क' समाप्त हो गया है। सहायक जियोलाजिस्ट लिख रहे हैं कि यहाँ से कुछ और दूर जाकर अब 'रिसर्च वर्क' आरम्भ करना होगा।"

"जब फिर जाते क्यों नहीं!"

"आपके मुख से······"

"आप मेरे मुँह से अन्तिम बार सुनना चाहते हैं, शायद मेरी बात आप पहिले ही सुन चुके हैं।"

"हाँ। बात तो यही है।"

"तो मैं आज मैं साफ साफ बात कह दूँ। जब मैं उस दिन वृक्षों के झुरमुट में बैठी हुई थी, मैंने आपको पेड़ों की ओट से देखा था। आपने दिन भर कड़ा प्रयत्न किया और धूप छाँह की परवाह नहीं की और न ही आपको किसी के साथ की आवश्यकता ही हुई। ऐसा लगता था कि आप निरुत्साहित हो गये हैं, जिसे प्राप्त करना चाहते हैं उसे पा भी नहीं सके हैं; किन्तु उसके दूसरे दिन भी इच्छा न होने पर भी मिट्टी पत्थर खोदते ही रहे। अपने शरीर को बलिष्ट बनाकर आप उस पर अपनी जीवन यात्रा कर रहे हैं। इस प्रकार का विज्ञान तपस्वी आज से पूर्व मैंने कभी नहीं देखा। मैंने आपकी दूर से ही भक्ति की है।"

"और शायद अब · "

'सुनिये, जो मैं कहना चाहती हूँ। जितना मेरे साथ आपका परिचय अधिक होता गया उतनी ही आपकी साधना दुर्बल होती गई। अनेक तुच्छ कारणों से आपके कार्य में बाधाएँ पड़ने लगीं। तब आप स्वयं अपने आप से और इस नारी से डरने लगे। छि: छि: कैसी पराजय की बात कह रही हूँ। यह आपके विषय में बात हुई। अब अपने विषय में कहती हूँ। मेरी भी एक साधना थी तपस्या के रुप में। यह निश्चित रुप से जानती थी कि उस से मेरा जीवन पवित्र और उज्ज्वल होगा। देखा कि धीरे २ पिछड़ती जाती हूँ-जो चपलता मेरे हृदय को चिरकाल से घेरे हुए थी उसकी प्रेरणा मुझे इस निर्जन वन प्रान्त की दुरूहता से प्राप्त हुई हैं-यह प्रेरणा मानव हृदय की है, जिसका उदय इन दुर्गम पहाड़ियों, हरे भरे उपवनों आदि से हुआ है। कभी कभी भयावनी काली रात्रि में, जबकि जंगल की जड़ चेतन वस्तुएँ सो जाती हैं, उस समय मेरे हृदय में यही विचार आते कि इस प्रकार की यह रात्रि मेरे लिये गत्तसी है। सम्भव है कि यह मुझे मेरे नाना जी को मुझसे छुड़ा कर कहीं दूर डालदे। उसके बाद बीस बीस तथा तीस तीस दिन ढलते हुए सूर्य की भाँति आकाश में आते और चले जाते हैं। उसी समय में हिरन के बच्चे की भाँति दौड़कर झरनों से दुग्ध जल में स्नान कर आई हूँ।"

इतना कह कर अचिरा ने आवाज दी "नाना जी।"

अपनी पढ़ाई को छोड़ अध्यापक उठ आये और मधुर स्नेह के साथ बोले "क्या है बेटी!"

"आप उस दिन कह रहे थे कि मानव सत्य का उदय उसकी तपस्या के द्वारा ही होता है। मेरी समझ में उसका उदय जीव विज्ञान से नहीं है।"
"हाँ। मेरा तो यही विश्वास है। संसार में मनुष्य बर्बर पशुओं से अधिक हिंसक है। केवल तपस्या के बल पर ही वह उदार चेता मानव बना हुआ है। मानव के लिये और भी तपस्या बाकी है; हृदय की और भी स्थूलता

मिटानी होगी तब कहीं वह अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा। पुराणों में देवता की कल्पना हुई है, किन्तु अतीत में देव नहीं थे ; वे मनुष्य द्वारा रचित भविष्य में देवता है।"

"नाना जी आज मैं आपकी तथा अपनी समस्त बातें समाप्त किये देती हूँ। कई दिनों से हृदय में उथल पुथल मच रही है।"

मैं उठ खड़ा हुआ, बोला "मैं जा रहा हूँ।"

"नहीं आप बैठिये। नानाजी आपके कालिज में अध्यक्ष का जो स्थान था अब पुनः रिक्त होगया है। सेक्रेटरी ने पुनः उस पद को सँभालने के लिये लिखा है। आप मुझे सब पत्र दिखला देते हैं किन्तु उसी को नहीं दिखला रहे हैं। इसलिये आपकी यह भावना देखकर मुझे आपका पत्र चुराने की इच्छा हुई।"

"मेरी ओर से अन्याय हुआ था।"

"अन्याय कुछ नहीं हुआ। मैं आपको आपके स्थान से नीचे खींच लाई हूँ। हम तो केवल उतारना ही जानती हैं।"

"क्या कह रही हो, बेटी?"

"सच ही कह रही हूँ, यदि संसार में कोई कार्य नहीं होता तो विधाता के हाथ बेकार होजाते। छात्र न होने से आपकी भी वही दशा हो गई है। बतलाइये। यह सच है अथवा नहीं?"

"बराबर स्कूल की मास्टरी करता हूँ क्या इसी से ...."

"आप और स्कूल मास्टर? आप में मास्टरी करने की प्रतिभा है तथा आप अपनी बात को आश्चर्यमय ढङ्ग से व्यक्त करते हैं। आपके ज्ञान की साधना आपके लिये नहीं, वह तो औरों के लिये है। आपने देखा नहीं नवीन बाबू के दिमाग में कोई बात आते ही वे मेरे पीछे पड़जाते हैं उनकी समझ में कुछ नहीं आता। वह आपके साथ बैठ जाते हैं तथा आपकी

ज्ञान गुत्थियों को वह सुलझा नहीं सकते। आप का मन किधर है उसे वह नहीं समझते, वह यही सोचते हैं कि वह विशुद्ध ज्ञान की ओर है। नानाजी! आपको यहाँ छात्र अवश्य चाहिये किन्तु उनके चुनने में भूल मत करना।" अध्यापक ने कहा "छात्र ही तो अध्यापक को चुनता है।" यह उसकी ही गरज है।"

"अच्छा यह सब बातें पीछे होंगी। मुझे इस बात का ज्ञान हो गया है कि जो शिक्षक हैं उन्हें मैंने पुस्तक का कीड़ा बना दिया है। मैंने तुम्हारी तपस्या अपनी अंधी गरज से भंग कर दी है। तुम्हें अपना कार्य सम्हालना ही होगा, तथा नगर में पहुंच कर उसे करना होगा।

चकित से अध्यापक अचिरा के मुख की ओर देखते रह गये। अचिरा ने कहा "अच्छा मैं समझ गई। आप सोच रहे हैं कि मेरी दशा क्या होगी; मेरी गति तो आप ही हैं। यदि आप नहीं चाहते तो दूसरी नानी की खोज कीजिये, अपनी लाइब्रेरी बेचकर उनके लिये गृह बनवा दीजियेगा, मैं कहीं और चली जाऊँगी। अहंकार न चढ़ गया हो तो आपको यह मानना होगा कि मेरे बिना आपका काम चल नहीं सकता। मेरी अनुपस्थिति में आप १५ आश्विन को १५ अक्टोबर समझने लगते हैं; तथा जिस दिन किसी सह अध्यापक को निमत्रण देते हैं उस दिन अपनी लाइब्रेरी के किवाड़ बन्द कर सवाल करने लग जाते हैं। गाड़ी में बैठ कर ड्राइवर को ऐसा स्थान बतलाते हैं, जहाँ आज तक कोई मकान ही नहीं बना। नवीन बाबू समझ रहे होंगे कि असम्भव बातें कह रही हूँ।"

मैंने कहा "बिलकुल नहीं। यह हालत तो मैं भी कुछ दिनों से देख रहा हूँ और इसीलिये बिना किसी शक सन्देह के समझ गया कि तुम जो कह रही हो सत्य ही कह रही हो।"

अध्यापक बोले "आज तुम कैसे ऐसे अपशकुन की बातें कर रही हो? नवीन! जानते हो इधर कुछ दिनों से ही इसे ऐसी बातें करने का साहस बढ़ गया है?"

"आप अपने काम पर चले तो जाइये फिर सारे उप सर्ग अपने आप

ही बन्द हो जायेंगे। साँस फिर वापिस आ जायगी, फिर अपने आप बेकार की बातें बन्द हो जायेंगी।"

अध्यापक ने मेरी ओर गौर से देखते हुए पूछा "नवीन। तुम्हारी क्या राय है?"

वह स्वयं ही इतने विद्वान हैं कि उनको राय देने में मेरी छोटी बुद्धि क्या काम कर सकती है। कुछ देर तक स्तब्ध रह कर मैं बोला "आपको अचिरा देवी से बढ़ कर और कोई सलाह नहीं दे सकता।"

उसी समय अचिरा खड़ी हो गई। मेरे पाँव छूकर उसने प्रणाम किया। संकुचित हो मैं पीछे हट गया।

अचिरा ने कहा "संकोच मत कीजिये, आपकी तुलना में मेरा कोई मूल्य नहीं। यह बात किसी दिन स्पष्ट हो जायगी। आज मैं यही अन्तिम विदा लेती हूँ। जाने से पूर्व अब शायद भेंट नहीं होगी।"

आश्चर्य चकित हो अध्यापक बोले "यह कैसी बात कह रही हो बेटी?"

"नाना जी। आप बहुत विद्वान हैं। किन्तु कुछ विषयों में मेरी बुद्धि आप से अधिक उन्नत है। विनय से इस बात को स्वीकार कर लीजिये।"

आचार्य के चरणों की धूलि लेकर मैंने उन्हें प्रणाम किया। उन्होंने मुझे अपनी छाती लगा कर कहा "नवीन। मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि तुम्हारे सामने तुम्हारी कीर्ति के सितारे जग मगा रहे हैं।"

मेरी छोटी सी कहानी यहीं समाप्त होती है। उसके बाद की बातें जियौलाजिस्ट की हैं।

घर जाकर मैं अपने काम काज के कागज तथा पुस्तकें देखने लगा। मन में सहसा एक विशद आनन्द जाग उठा। मन ही मन बोला इसी को मुक्ति कहते हैं। शाम को दिन भर का काम पूरा कर के बरॉडे में जा बैठा। मुझे ऐसा लगा जैसे पक्षी तो पिंजरे से निकल आया है। किन्तु पैर में जंजीर का टुकड़ा शेष है। चलने फिरने में वही स्मृति सजग हो उठती है।

---

३ लैबोरेटरी

★ ★
★

नन्द किशोर ने लन्दन यूनिवर्सिटी से इञ्जीनियरिंग पास की थी। अपने छात्र जीवन में वह अत्यन्त प्रतिभाशाली छात्र थे। स्कूल से लेकर यूनीवर्सिटी तक उनका स्थान हमेशा प्रथम ही रहा था। उनकी बुद्धि तीक्ष्ण थी, आवश्यकताऐं बढ़ी हुई थीं, किन्तु उनके सामने एक बड़ी कठनाई थी धन की।

वह सब रेल्वे कम्पनी के विशाल पुलों के बनवाने में सहायता करने लगे थे। इस काम में आयव्यय खूब होता है किन्तु मनुष्य जैसा सोचते हैं वास्तव में वैसा नहीं है। जब वह इस काम को सुचारु रूप से चला रहे थे तब हानि का कोई भय नहीं था। क्योंकि यह काम कम्पनी का था, इसमें व्यक्ति विशेष का कोई हानि लाभ नहीं था।

अपने काम में वह अत्यन्त कुशल थे। मालिक लोग उन्हें प्रतिभावान

कहा करते थे, क्योंकि उनके काम में किसी भी प्रकार की त्रुटि नहीं रहती थी। वह भारतीय थे इसलिये उनका वेतन कम था। निम्न दरजे के अँगरेज कर्मचारी जब अपने पैन्ट की जेब में हाथ डाल कर उनसे पूछते 'हलो मिस्टर मलिक' तथा जब उनकी पीठ थपथपाते थे तब उन्हें यह व्यवहार अच्छा नहीं लगता था, विशेषतया उस समय जब कि काम तो वह करते और रुपया तथा प्रशंसा मिलती अँगरेजों को। इसका फल यह हुआ कि अपने प्राइवेट रुपये का हिसाब वह अलग रखते तथा उसे वसूल करने का भी उन्हें अच्छा आर्ट मालूम था।

नन्दकिशोर ने किसी भी दिन नकद और उधार रुपयों को प्राप्त करके कभी फैशन नहीं किया। सिकन्दर पाड़ा में एक डेढ़ मंजिले मकान में वह रहते थे। उनके पास इतना भी समय नहीं था कि वह कारखाने के गन्दे कपड़े तो उतार देते। यदि कोई उनकी मजाक उड़ाता तो वह हँस कर कह देते 'मेरे पास मजदूरों के यही कपड़े हैं जो कि मेरे काम के तमगे हैं।'

उन्होंने परीक्षा एवं वैज्ञानिक संग्रह दृष्टि कोण से ही विशेष रूप से एक मकान बनवाया था। अपने काम में वह इतने व्यस्थ थे कि किसी भी प्रकार की काना फूसी उनके कानों तक पहुँचती ही नहीं थी। कभी कभी वह कह दिया करते थे 'अलादीन के चिराग की तरह इतना बड़ा मकाम अभी तक कहाँ था!'

जब मनुष्य के लिये कोई शौक लग जाता है तब उसके लिये वह शराब से भी अधिक हो जाता है, उस मनुष्य को इस बात का शक ही नहीं होता कि अन्य लोग उसके विषय में क्या कह रहे हैं। असल में बाबू नन्दकिशोर विचित्र ही प्रकार के मनुष्य थे। हर समय उन्हें केवल विज्ञान की ही धुन रहती थी। वैज्ञानिक पुस्तक पढ़ते २ कभी २ वह अपनी कुर्सी के हत्थे को पकड़ कर झकझोर डालते थे। जर्मनी तथा अमेरिका से वह ऐसे कीमती कीमती यन्त्र मँगाते कि उनका यहाँ के विश्व विद्यालय में भी प्राप्त

होना कठिन था। इस विद्या लोभी के हृदय में यही एक वेदना थी। इस देश में ज्ञान की सस्ती डिगरियों पर ही लोगों को उच्च पद मिल जाया करता है। विलायत में विद्यार्थियों को बड़े २ यन्त्रों का व्यवहारिक ज्ञान कराया जाता है, किन्तु हमारे देश में विद्यार्थियों को इस प्रकार की कोई सुविधा नहीं। इसीलिये यहाँ के विद्यार्थियों को केवल पाठ्य पुस्तकों का ही कोरा ज्ञान रहता है। नन्दकिशोर हमेशा दृढ़ स्वर में कहा करते थे कि 'हमारे पास ज्ञान की कमी नहीं किन्तु हमारी जेबों में धन नहीं।' उनका प्रण था कि किसी भी प्रकार हो विद्यार्थियों के लिये विस्तृत मार्ग खोला जाय।

जितने ही कीमती यन्त्र उनके पास एकत्रित होने लगे उतने ही बराबर काम करने वाले उनसे जलने लगे। इस समय बड़े साहब ने उन्हें संकट से बचाया। नन्दकिशोर की कुशलता पर उन्हें काफी श्रद्धा थी इसके अतिरिक्त वह यह भी जानते थे कि नन्दकिशोर ने अपने कुशल हाथों से कितने रेलवे पुल बनवाये थे।

उन्होंने नौकरी छोड़ दी। साहब की सहायता से रेलवे कम्पनी का पुराना लोहा खरीद कर उन्होंने अपना निजी कारखाना लगाया। उस समय योरुप का प्रथम युद्ध आरम्भ हो चुका था। इसीलिये सारी चीजों के दाम बढ़ गये थे। नन्दकिशोर अति व्यवहार कुशल, चतुर तथा बुद्धिमान व्यक्ति थे। इसीलिये तेज बाजार में उनकी वस्तुओं ने मुनाफे से रुपयों का ढेर लगा दिया था।

इसी समय उनको एक शौक और लग गया। कुछ दिन पहिले व्यवसाय के काम से एक बार नन्दकिशोर पंजाब गये थे। वहाँ उनको एक संगिनी मिल गई। सबेरे बरामदे में बैठे चाय पी रहे थे, इतने में बीस वर्षीया एक तरुणी अपना गरारा हिलाती हुई उनके सामने निस्संकोच आ खड़ी हुई। उसकी आँखें चमकदार हैं तथा होठों पर मधुर मुस्कान है ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने होठों द्वारा अपनी ओर देखने वालों पर छुरी चला

रही हो। उसने नन्दकिशोर के सामने आकर कहा "बाबूजी मैं प्रति दिन दोनों समय यहाँ आकर आपको देख रही हूँ। आपको देख कर मुझे आश्चर्य होता है।

हँसते हुए नन्दकिशोर ने कहा "क्यों ? क्या तुम्हारे यहाँ चिड़िया घर नहीं है ?"

उसने कहा "उसकी कोई आवश्यकता नहीं। जिनको अन्दर देखना चाहती हूँ, वह बाहर नजर आते हैं। इसीलिये मैं मनुष्य की तलाश में हूँ।"

नन्दकिशोर की ओर इंगित करके वह बोली "मिल तो गया।"

नन्दकिशोर ने कहा "जरा बतलाओ तो सही कि गुण क्या देखा ?"

उसने कहा "यहाँ के बड़े २ सब सेठ गलों में जंजीर लटकाये, हाथों में हीरे की अंगूठियाँ पहिने, आपको घेरे फिर रहे थे। सोचा था कि परदेशी बंगाली है, किसी कारोबार को समझता नहीं है। अच्छी चिड़िया फँसी है। किन्तु देखा कि आप उनमें से किसी के भी फन्दे में नहीं फँसे, उल्टे वह ही आपके प्रभाव में आ गये। किन्तु वह लोग अभी तक इस बात को नहीं समझे वरन् मैं समझ गई हूँ।"

उसकी बात को सुन नन्दकिशोर चौंक पड़े। वह समझने लगे कि यह यह लड़की मामूली नहीं, कोई पहुँची हुई है।

लड़की ने कहा "सुनिये! आप से मैं अपनी बात कहती हूँ। मेरे मौहल्ले में एक नामी ज्योतिषी है। एक बार मेरी जन्म पत्री देख कर उन्होंने कहा था कि दुनियाँ में मेरा बहुत नाम होगा। तथा यह भी कहा था कि मेरे जन्म स्थान में शैतान की दृष्टि है।"

नन्दकिशोर ने कहा "क्या कहती हो शैतान की दृष्टि है !"

लड़की ने कहा "बाबू साहब! आप तो जानते हैं दुनियाँ में सबसे बड़ा नाम शैतान का है। मनुष्य उसकी निन्दा चाहे जितनी करे किन्तु है

तो सच। हमारे महादेव बाबा नशे पत्ते में चूर रहते हैं। उनका काम संसार चलाना नहीं है। देखिये! अंग्रेजों ने शैतानी के बल से संसार पर विजय प्राप्त की है न कि क्रिस्चियेनिटी के बल पर। किन्तु वे अंग्रेज हैं खैर इसी से राज्य की रक्षा कर सके हैं। जिस दिन वह अपना लक्ष्य बदल देंगे बस उसी दिन शैतान उनसे असन्तुष्ट हो जायगा और राज्य पलट देगा।"

नन्दकिशोर आश्चर्य करने लगे।

लड़की कहने लगी "बाबूजी क्रोधित मत होना। आपके अन्दर उस शैतान का अंश है। इसी से आपकी जीत होगी। मैंने बहुत से पुरुषों को बहकाया है किन्तु आपने मुझे बहका दिया है। बाबू मुझे मत छोड़ियेगा नहीं तो आप नुकसान में रहोगे।"

नन्दकिशोर हँस दिये बोले "करना क्या होगा?"

"कर्ज के मारे मेरी नानी का घर द्वार सब बिका जा रहा है आपको उसका कर्ज चुकाना होगा।"

"कितना रुपया देना है?"

"सात हजार।"

नन्दकिशोर उसके दावे की बात सुन कर चौंक पड़े! बोले "अच्छा इतना रुपया मैं दे दूँगा। किन्तु इसके बाद?"

"उसके बाद मैं आपका साथ कभी भी नहीं छोड़ूँगी।"

"मेरे साथ रह कर तुम क्या करोगी?"

"देखूँगी कि मेरे सिवाय तुम्हें और कोई ठग न सके।"

नन्दकिशोर के हृदय की कसौटी पर किसी कीमती धातु का निशान पड़ गया था। उन्होंने देख लिया था कि लड़की के मुख पर उसके उज्ज्वल चरित्र का तेज चमक रहा था, और यह भी समझ गये कि अपना मूल्य वह स्वयं

समझती है। नन्दकिशोर ने अनायास ही कह दिया था और दे भी दिया सात हज़ार रुपया।

उस लड़की को वहाँ सब सोहनी कहा करते थे। उसका शरीर सुगठित तथा चेहरा सुन्दर था। किन्तु नन्दकिशोर ऐसे आदमी नहीं थे कि चेहरा देख कर ही रीझ जाँयें। यौवन के बाजार में मन का जुआ खेलना वह नहीं जानते थे।

जिस दिशा से नन्दकिशोर सोहनी को लाये थे वह अधिक निर्मल नहीं थी और न निर्जन बन के समान ही थी। नन्दकिशोर इस प्रकार के व्यक्ति थे कि सांसारिक प्रयोजन में आचार विचार की परवाह ही नहीं करते थे। कभी २ उनके मित्र उनसे पूछते 'क्या शादी करली है ?" वह उत्तर देते थे 'बहुत अधिक मात्रा में नहीं सहने लायक ही शादी हुई है।' लोग यह देख कर हँस देते थे कि अपनी विद्या के साँचे में अपनी स्त्री को ढालने में वह जुट पड़े हैं। और पूछते 'क्या श्रीमती जी कहीं प्रोफेसरी करने जायेंगी ?" नन्दकिशोर उत्तर देते 'नहीं ! उसे तो नन्दकिशोरी बनाना है, हर स्त्री से यह नहीं हो सकता।' कहते 'मैं असवर्ण विवाह पसन्द नहीं करता।'

"सो कैसे ?"

"पति हो इञ्जीनियर और पत्नी हो रसोई दारिनी। यह धर्मशास्त्र में निषेध है। घर २ में देखा जाता है दो अलहदा जात का गठ बन्धन है, मैं जात मिलाये ले रहा हूँ। पति व्रता स्त्री चाहते हो तो पहिले व्रत का मेल कराओ।"

२

प्रौढ़ अवस्था ही में किसी एक दुस्साहस पूर्ण वैज्ञानिक परीक्षण के कारण नन्दकिशोर की मृत्यु होगई।

सोहनी ने सब कारोबार बन्द कर दिया। विधवा स्त्री को ठगने के लिये

चारों ओर से कारोबारी लोग आ टूटे। उन लोगों ने जिनका उनसे नाम मात्र का सम्बन्ध था, नन्दकिशोर पर मुकदमा चला दिया। सोहनी स्वयं समस्त कानूनी दांव पेंच समझने लगी। वकीलों के मुहल्ले में ठीक जगह देख कर उस पर लोगों ने मोह जाल फैला दिया। एक एक करके वह सब बातों में जीत गई तथा उसका देवर दस्तावेज बनाने के अपराध में जेल भेज दिया गया।

सोहनी के एक लड़की थी, जिस का नाम रखा था नीलिमा। लड़की ने उसमें परिवर्तन कराके 'नीला' करा लिया। कोई यह न समझे कि लड़की का रंग काला है, माँ बाप ने उसके नाम के नीचे निन्दा का शब्द हटा दिया है लड़की बहुत ही गोरी है। माँ कहा करती है कि उसके पुरखे काश्मीर से आये थे। लड़की के शरीर में श्वेत कमल का सौरभ है, आखों में झीलों की नीली गहराई तथा केशों में पिंगल वर्ण की चमक है।

नीला के विवाह के लिये कुल, जाति, गोत्र की बात पर विचार करने का कोई प्रसङ्ग ही नहीं था। जो युवक उसे लुभा सकता था वही उसे अपनी बना सकता था। कम उम्र का एक मारवाड़ी लड़का था, पिता काफी धन छोड़ मरे थे और भलीभाँति शिक्षित था। अकस्मात वह नारीके रूप में फँस गया। एक दिन स्कूलके फाटकपर नीला गाड़ी की प्रतीक्षा में खड़ी थी; इसी बीच उस लड़के ने उसे देखा, उसके बाद भी वह उसी मार्ग पर अनेकों बार आताजाता रहा। नारी बुद्धि की स्वाभाविक प्रेरणा से लड़की गेट के पास आकर बहुत पहिले से ही खड़ी हो जाती थी। केवल वही मारवाड़ी लड़का नहीं अनेकों अन्य लड़के भी वहाँ आने लगे; किन्तु उसके प्रेम का दीवाना उनमें से एक वही लड़का बना। समाज को लात मार कर उसने उससे एक सिविल मैरिज करली। किन्तु वह अधिक समय तक नहीं टिक सका। उसके भाग्य से स्त्री आई और उन दोनों के दाम्पत्य जीवन के बीच मोतीझला ने एक रेखा खींच दी। परिणाम मृत्यु।

समाज में फिर भले बुरे का उपद्रव चलने लगा। माँ को लड़की तड़फन दिखलाई देने लगी और अपने यौवन काल के ज्वालामुखी की स्मृति सजग होगई। माँ का मन अशान्त हो उठा। उसने लड़की की पढ़ाई बन्द कर दी। पुरुष शिक्षक के स्थान पर एक विदुषी उसे पढ़ाने को नियुक्त की। नीला के मन में यौवन की उष्णता भरी रहती थी, जिसे वह कामना की इच्छा से और भी अधिक करलेती थी उसपर प्राण न्यौछावर करने वालोंके दल उसके चारों ओर भीड़ लगाये रहते थे मार्ग बन्द था। उससे मित्रता करने कीइच्छुक स्त्रियाँ उसको चाय टेनिस, सिनेमा आदिके निमन्त्रण देती रहतीं। किन्तु निमन्त्रण पत्र उसके पास भी नहीं पहुंचता था। बहुत से यौवन के लोभी-भ्रमर की भाँति उसके चारों ओर मँडराने लगे। किन्तु किसी भी अभागे को सोहिनी का इष्ट-पत्र न मिल सका। उधर यह उत्कण्ठित कन्या मौका पाते ही उभकना-भाँकना चाहती थी। वह ऐसी पुस्तकें पढ़ती जो उसके पाठयक्रम में नहीं थी। लुकछिपकर उसने ऐसे ऐसे चित्र मँगवाये थे जो आर्ट के विरुद्ध थे विदुषी अध्यापिका को उसने नाराज कर दिया, एक दिन डाँसिङ्ग से लौटते समय मार्ग में एक सुन्दर युवक ने जिसके बाल सूखे २ थे मूँछें अभी आ ही रहीं थी उसकी गाड़ी में पत्र डाल दिया उस दिन लड़की के रक्त में कँप कँपी आगई अपनी कुर्सी में उसने चिट्ठी छिपा रखी थी। माँ ने उसे देख लिया। दिन भर कमरे में बिना खाये पीये वह बन्द पड़ी रही।

उसके पति ने जिन अच्छे अच्छे विद्यार्थियों को छात्र वृत्ति दी थी उन सब में सोहिनी ने वर की तलाश आरम्भ की। किन्तु सब चुपके २ उसके धन की ओर देखते हैं। एक लड़का तो अपनी थीसिस ही उसके नाम समर्पण कर बैठा। सोहिनी ने कहा 'हायरे भाग्य! तुमने मुझे कितना लज्जित किया है। तुम्हारो पोस्ट ग्रेजुएट की अवधि समाप्त होने को है पूजा करते हो सिद्धान्त के विरुद्ध-भक्ति किये बगैर उन्नति होगी नहीं।'

कुछ दिनों से एक लड़के की ओर सोहिनी का विशेष ध्यान जा रहा है। लड़का पसन्द आ गया है। उसका नाम है रेवती भट्टाचार्य। वह अभी से सन्यासी सा है। उसके एक दो लेखों की प्रशंसा विदेशों में भी हुई है।

३

लोगों से मिलने जुलने की कला सोहिनी खूब जानती थी। मन्मथ चौधरी खेती के शुरू २ के अध्यापक हैं। उन्हें सोहनी ने वश में कर लिया है। कुछ दिनों अण्डे, टोस्ट, आमलेट आदि खिला पिलाकर उसने बातें शुरू कीं। बोली "आप शायद सोचते होंगे कि बार २ मैं आपको चाय पीने क्यों बुलाती हूँ ?"

"मिसेज मलिक। मैं आपसे बिलकुल ठीक कहता हूँ कि मेरा विचार यह कभी नहीं था।"

सोहनी ने कहा "लोग सोचते होंगे कि हम स्वार्थ के कारण मित्रता किया करते हैं।"

"देखो मिसेज मलिक। आदमी की गरज चाहे कुछ भी हो, किन्तु मित्रता करना भी तो एक लाभ है। और यह भी कौनसी कम बात है कि मुझ जैसे अध्यापक से भी किसी का स्वार्थ सध सकता है। वास्तव में अध्यापकों की बुद्धि बाहर का ज्ञान न होने से फीकी पड़ जाती है। मालूम होता है कि मेरी बात सुनकर तुमको हँसी आरही है। देखो। यद्यपि मैं मास्टरी ही करता हूँ फिर भी मुझे मजाक करना आता है। भविष्य में आप का निमंत्रण देने से पूर्व इन बातों का जान लेना आवश्यक है।"

"समझ लिया। आफत कम हुई। मैंने बहुत से अध्यापक देखे हैं जिनके मुँह से हँसी आती ही नहीं। इसके लिये डाक्टर बुलवाना पड़ता है।"

"वाह ! वाह ! मेरे ही जैसे विचारों की हो तुम। तो अब असल बात बतलाओ।"

"आप शायद जानते होंगे कि मेरे पति के जीवन में उनका एक मात्र आनन्द था उनकी 'लैबोरेटरी। उस लैबोरेटरी में बैठने के लिये कोई लड़का नहीं है। मैं एक लड़का खोज रही हूँ। सुना है! रेवती भट्टाचार्य इस योग्य है।"

अध्यापक ने कहा "लड़का तो योग्य है इसमें तो कोई सन्देह नहीं। किन्तु जिस प्रकार की उसकी विद्या है उसे अन्त तक चलाने में धन काफी व्यय होयगा।"

सोहनी ने कहा "मेरे पास काफी रुपया है, किन्तु है बेकार। मेरी आयु की विधवायें देवी देवताओं पर रुपया चढ़ाकर अपना परलोक सुधारा करती हैं। शायद यह सुनकर आप नाराज़ होंगे कि उन बातों पर मेरा विश्वास नहीं है।"

चौधरी ने आश्चर्य से पूछा "तो फिर तुम क्या मानती हो?"

"यदि सच्चे अर्थों में कोई मनुष्य मिले तो जितना मेरा वश चले उतना धन मैं उसको दे दूँ। यही मेरा धर्म कर्म है।"

चौधरी बोल उठे "हुर्रे! पानी में पत्थर बहता है। अब मैं यह देख रहा हूँ कि नारी में भी कहीं कहीं बुद्धि का प्रमाण मिलता है। मेरा एक छात्र बी० एस० सी० पास है। वह मूर्ख है। अचानक क्या देखता हूँ कि मेरा पैर छूकर वह कला बाजी खाने लगा था, उसका दिमाग बिल्कुल सेमल की रुई की तरह उड़ने लगा था। तो तुम उसे अपने घर की लैबोरेटरी में बैठा देना चाहती हो। अन्यत्र कहीं ऐसा नहीं चल सकता।"

"चौधरी साहब आप गलती मत कीजिये आखिर हूँ तो स्त्री। यहीं इस लैबोरेटरी में मेरे पति ने साधना की है। यदि मैं उनके पवित्र स्थान पर किसी को बैठा सकती हूँ तो कैसे भी हो किसी को बैठाकर दीपक

प्रज्ज्वलित करवा दूँगी। वह व्यक्ति कोई भी हो सदैव प्रसन्न ही रहेगा।"

चौधरी ने कहा "अब नारी के कण्ठ की आवाज सुनाई दी। सुनने में मधुर है। एक बात समझ लेना कि यदि रेवती को सहायक करना चाहती हो तो एक लाख रुपये से अधिक लगेगा।"

"यह करने के बाद भी कुछ न कुछ गुजारे लायक मेरे पास रह ही जायगा।"

"किन्तु जिन्हें प्रसन्न करना चाहती हो वह परलोक में कहीं तुमसे असन्तुष्ट तो नहीं हो जायेंगे। मैंने सुना है कि यदि चाहें तो परलोक के जीव सिर पर चढ़कर उपद्रव कर सकते हैं।

"आप समाचार पत्र तो पढ़ते ही होंगे। मनुष्य की मृत्यु के होते ही पत्रों में उसकी प्रशंसा लहराने लगती है। इसलिये मृत व्यक्ति की महानता पर विश्वास करने में कोई सन्देह नहीं। जिस मनुष्य ने रुपये पैदा किये हैं उसने पाप भी बहुत से किये होंगे। यदि हम लोग उनकी थैली को गाड़कर उसे हलका न कर सकें तो फिर हैं किस काम के लिये? जाने दो रुपया, मुझे उसकी आवश्यकता नहीं।"

उत्तेजित होकर अध्यापक बोल उठे "अब मैं तुमसे क्या कहूँ? खान से सोना निकलता है। वह शुद्ध सोना है, यद्यपि उसमें बहुत कुछ मिला होता है। तुम वही छद्मवेषी सोने की डली हो। मैंने तुम्हें पहिचान लिया। बतलाओ! अब क्या करना है?"

"उस लड़के को राजी कर लीजिये।"

"कोशिश करूँगा, किन्तु काम आसान नहीं है। और कोई होता तो तुम्हारा दान प्रसन्न होकर स्वीकार कर लेता।"

"अड़चन क्या दिखलाई देती है?"

"बचपन से उसके ऊपर एक स्त्री का प्रभाव है। वही इसका मार्ग

अवरुद्ध कर रही है ।"

"कहते क्या हो। पुरुष होकर......"

नाराज़ कैसे हो गई? "देखो मिसेज मजूमदार! जानती हो मेट्रियार्कल समाज किसे कहते हैं? जिस समाज में स्त्रियाँ ही पुरुषों से श्रेष्ठ हों, उसे किसी समय द्रविड़ समाज की विचार धारा बंग सागर तक आया करती थी।"

सोहनी ने कहा "वे सुखद दिन तो बीत गये। भीतर ही भीतर लहरें खेल रही होंगी जो कि मन को उलझा देती होंगी किन्तु सागर से पार जाने के लिये पतवार तो पुरुषों के ही हाथ में है। वही कान में मन्त्र फूँकते हैं तथा एँठते भी जोर से है। और कभी कभी तो कान सूजने की भी नौबत आजाती है।"

"आहा! तुम बात करना खूब जानती हो। सुनो! यदि तुम्हारी जैसी स्त्रियों का कभी युग आये तो मैं तो उनके कपड़ों की धुलाई का हिसाब रखूँ और कालिज के प्रिन्सिपल से चरखा चलवाऊँ। मनोविज्ञान कहता है कि बंगाल में नारियों का आधिपत्य है। माँ, माँ की हर्षध्वनि किसी भी देश के मनुष्य नहीं करते। यह तुम्हें बतलाये देता हूँ कि रेवती के हृदय पर एक युवती ने अपना आसन जमा रखा है।"

"किसी से प्रेम करता है क्या?

"अरे। तब तो कोई बात ही नहीं थी। उसके प्राण उसकी नसों में धुकर धुकर होते रहते हैं। उस युवती के साथ रहकर वह अपनी बुद्धि का नाश कर रहा है। इस छोटी सी ही उम्र में वह एक माला जपने वाली के हाथ दाना बन गया है। उसे कौन बचायेगा? उसे कोई भी नहीं बचा सकता न यौवन, न विज्ञान और न बुद्धि ही।

"अच्छा! उसे एक दिन यहाँ चाय पीने के लिये बुलाया जा सकता

है ? हम जैसे अपवित्रों के घर खा पी तो लेगा ?"

"अपवित्रों के घर नहीं खायगा तो धोबी के घाट पर पछाड़ २ कर मैं उसे ऐसा पवित्र कर दूँगा कि उसके शरीर पर ब्राह्मण पन का कोई भी दाग नही रह जायगा। एक बात मैं तुम से पूछता हूँ कि तुम्हारे एक सुन्दरी लड़की है न ?"

"है। वह मरी है तो सुन्दरी किन्तु उसका क्या करूँ ?"

"नहीं ! नहीं ! मुझे गलत मत समझना। मेरी एक बीमारी ही समझो कि मैं सुन्दरी लड़की ही पसन्द करता हूँ; किन्तु उसके घर वाले रसिक नहीं, शायद डर जाय।"

"डरने की कोई बात नहीं, मैंने उसका विवाह अपनी ही जाति में करने का निश्चय किया है।"

"यह जातीयता तो बनावटी वस्तु है, तुमने स्वयं तो विजातीय विवाह किया है।" चौधरी ने कहा।

"विवाह करके कम परेशान नहीं हुई। सम्पत्ति पर अधिकार बनाये रखने के लिये मुझे मुकद्मे लड़ने पड़े। मुकदमे किस तरह जीती हूँ यह कहने की बात नहीं।"

"कुछ कुछ सुन चुका हूँ। विरोधी पक्ष के क्लर्क के साथ तुम्हारी—कुछ अफवाह फैल गई थी। मुकदमा जीतकर तुम तो चली आई हो किन्तु वह बेचारा किसी तरह मरते २ बचा है।"

"इतने समय से नारी किस सहारे पर टिकी हुई है ? छल करने में कुछ कम चतुराई नहीं लगती वह भी लड़ाई के दाँव पेचों के समान है। जिसमें कुछ मधुर भी बनना होता है। नारी की यह युद्ध नीति उसके स्वभाव के ही अनुसार है।"

"देखो ! तुम फिर मुझे गलत समझ रही हो। हम विज्ञानी हैं,विचारक

नहीं। स्वाभाविक खेल को हम कामना की वस्तु नहीं समझते हैं। उस खेल परिणाम हम पहले ही जान लेते हैं। तुम्हारे लिये भी परिणाम मधुर हुआ था। मैंने कहा था 'तुम जैसी स्त्री धन्य है। और यह भी कहा था कि अच्छा हुआ जो मैं उस समय प्रोफेसर था-क्लर्क नहीं, नहीं तो मुझे भी उस रोग का शिकार होना पड़ता। मर्करी सूर्य से जितना दूर रहेगा उतना ही सुरक्षित भी। यह तो गणित का हिसाब है। इससे न कुछ अच्छा है, और न कुछ बुरा। शायद ये सब बातें तो तुम समझती होगी?"

"हाँ सो तो समझती हूँ. ग्रह औरों को आकर्षित करते हैं और स्वयं बचकर चलते हैं यह भी एक सीखने लायक तत्व है।"

'और भी एक बात मंजूर कर रहा हूँ। तुमसे बातें करते करते मनही मन एक हिसाब लगा रहा था यह भी गणित का हिसाब है। सोचलो। यदि आज उम्र दस वर्ष कम होती तो बेकार का सामना करना करना पड़ता। हार्ट फेल होते होते बच गया फिर भी हृदय में तूफान आ रहा है। सोच देखो संसार आरम्भ से अन्त तक गणित का ही खेल है।"

इतना कह कर चौधरी अपने दोनों घुटनों पर जोर से थपकियाँ जमाते हुए ठहका मारकर हँस पड़े उन्हें एक बात का होश ही नहीं था कि उनसे मिलने से पहले ही सोहनी अपना रूप रंग इस प्रकार बदल आई कि चौधरी तो क्या निर्माण कर्ता भी धोका खाजाय।

४

दूसरे दिन चौधरी ने देखा कि सोहनी एक माँस हीन, मरियल से कुत्ते को नहला दे रही और तौलिया से उसके शरीर को पोंछ रही है।

चौधरी ने पूछा" इस मनहूस जानवर का इतना सम्मान क्यों हो रहा है?"

सोहनी ने कहा "इसलिये कि उसे मरने से मैंने बचाया है। मोटर के नीचे आ गया, इसकी टाँग टूट गई। बैण्डेज बाँधने से वह अब ठीक होने लगी है। उसके जीवन में मेरा भी हिस्सा है।"

"नित्य प्रति इस की मनहूस सूरत देखने से चित्त को ग्लानि नहीं होगी।"

सूरत देखने के लिये तो इसे नहीं रखा है। मरते मरते यह जी जो रहा, यह देखना मुझे अच्छा लगता है। इस मरते हुए बच्चे को मैं बचाती ही हूँ, हिंसकों की भाँति बकरी के बच्चे के गले में रस्सी बाँध कालीघाट पर बलि नहीं चढ़ाती। तुम्हारी बायलौजी की लैबोरेटरी के अपाहिज खरगोशों, कुत्तों के लिये मैंने एक अस्पताल खोलने की व्यवस्था की है।"

"मिसेज मल्लिक! तुम्हें देखकर मैं आश्चर्य चकित रह जाता हूँ।"

"और अधिक देखेंगे तो आपका आश्चर्य जाता रहेगा। आपने रेवती बाबू के बारे में समाचार देने को कहा था, कहिये।"

"मेरे साथ उन लोगों का दूर का सम्बन्ध है इसलिये मुझे उनके घर की सब बातें मालूम रहती हैं। रेवती की माँ उसे जन्म देकर मर गई थी। आरम्भ से ही बुआ के हाथों में पला है। उसकी बुआ की आचारनिष्ठा बिल्कुल भिन्न है। वह ऐसी है कि थोड़ी सी गलती होते ही दुनिया को सिर पर उठा लेती है। उनके घर में ऐसा कोई भी आदमी नहीं है जो उससे डरता न हो। उसके सामने रेवती का पौरुष कुछ भी नहीं है। कालिज से लौटने में यदि पाँच मिनट की भी देर हो जाय तो पचीस मिनट उसकी सफाई देने में लग जाते हैं।"

सोहिनी ने कहा "पुरुष शासन करें और स्त्रियाँ लाड़ प्यार, तब ही गृहस्थी ठीक चलती है।"

अध्यापक ने कहा "स्त्रियाँ व्यवहार से स्थिरता लाकर कार्य नहीं करतीं

वह अपने स्वाभाविक धर्म के अनुसार इधर उधर झुकेगी। बुरा न मानना मिसेज मलिक! इस जाति में दैवयोग से ही कोई बिरली स्त्री ऐसी मिलेगी जो माथे को ऊँचा करके सीधी चाल चलती हैं।"

"खैर! अब कहने की आवश्यकता नहीं। पर मेरे हृदय में भी स्त्री का जड़ स्वरूप यथेष्ठ मात्रा में है। देखते नहीं कितनी झुकी जा रही हूँ। यह लड़का फाँसने का तरीका है। नहीं तो आपको परेशान क्यों करती?"

"देखो! बार बार इस बात को मत कहा करो। समझलो! आज बिना तैयारी किये ही क्लास पढ़ाने चला आया हूँ। आज कर्तव्य की असावधानी बहुत भली मालूम हो रही है।"

"शायद स्त्री जाति पर आपकी विशेष कृपा है?"

"कुछ भी असम्भव नहीं है। किन्तु उसमें कुछ तत्व अवश्य है। खैर! यह बातें फिर होगी।"

सोहिनी ने हँसते हुए कहा "पीछे नहीं भी हो तो काम चल जायगा। रेवती बाबू की इतनी उन्नति कैसे हुई?"

"जितनी होनी चाहिये थी उतनी नहीं हुई। किसी काम से उसे एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ना आवश्यक हो गया था। उसने बद्रिकाश्रम जाने का निश्चय कर लिया था। किन्तु, आश्चर्य की बात देखिये, उसकी बुआ की एक बुआ थी जो जाकर ठेठ बद्रिकाश्रम के मार्ग में मरी। बूआने भतीजे से साफ कह दिया कि जब तक वह जिन्दा रहेगी तब तक भतीजा पहाड़ पर नहीं जा सकता। अतएव तब से मैं जो प्रार्थना अपने हृदय में कर रहा हूँ, उसे मुँह से खोलकर नहीं कह सकता।"

"ठीक है! किन्तु, केवल बुआ को ही दोष देने से काम नहीं चल सकेगा। क्या बुआ के प्रिय भतीजे की बुद्धि कभी पकेगी ही नहीं?"

"सो तो मैं पहिले ही बतला चुका हूँ कि बच्चों की नसों में देवी

के अस्तित्व को जगा दिया जाता है जिससे वे हत बुद्धि हो जाते हैं। खेद की बात कहाँ तक कहूँ। यह तो हुई बात नम्बर एक। उसके बाद सरकार ने जब उसे कैम्ब्रिज जाने की आज्ञा दी तब फिर बुआजी रोने लगीं, उनकी धारणा थी कि वह मेम से शादी करने जा रहा है। मैंने कहा 'यदि कर ही लेगा तो क्या है ?' बस फिर क्या था। बात अनुमान की थी पक्की होगई। बुआजी ने कहा 'लड़का यदि विलायत गया तो मैं फाँसी लगाकर मर जाऊँगी।' किस देवता की दुहाई देने से फाँसी की रस्सी बनकर तैयार हो जाती, यह बात मैं नास्तिक होने के कारण न जान सका। इसलिये मन मर कर रहगया। रेवती को मैंने खूब फटकारा। उससे बेवकूफ। गधा !! आदि भी कहा। आप भारतीय कोल्हू से बूँद बूँद तेल निकालने में व्यस्त हैं !"

सोहनी अपना धैर्य खो बैठी। बोली "सिर दीवाल से दे मारने को जी करता है। खैर कोई बात नहीं। यदि एक स्त्री ने उसे पाताल में पहुंचाया है तो दूसरी उसे हाथ से पकड़कर आकाश में उठायेगी। यह मेरा प्रण।"

"एक बात साफ करता हूँ, मैडम ! कि तुम्हारे हाथ जानवरों को सींग पकड़कर झुकाने में पक्के हैं, किन्तु पूछ पकड़कर निकालने में उतने अभ्यस्त नहीं। हाँ अब अभ्यास शुरु कर सकती हो। एक बात पूछता हूँ कि विज्ञान के प्रति तुमनेइतना उत्साह कहाँ से आया ?"

"आजन्म मेरे पति का मन हर तरह के विज्ञान में इतना तल्लीन रहा है कि लोग उसे पागलपन ही कहते हैं। उनको व्यसन केवल दो थे 'बर्मी चुरुट' और ('लैबारेटरी') मुझे चुरुट पिला पिला कर करीब २ बर्मी स्त्री बना दिया था। बाद में जब मैंने देखा कि मैं पुरुषों की दृष्टि में अखरने लगी हूँ तो मैंने छोड़ दिया। इन्होंने मेरे ऊपर अपना एक और नशा जमाया था। पुरुष स्त्रियों को मूर्ख बनाकर अपने ऊपर मुग्ध करते हैं।

उन्होंने मुझे अपनी विद्या से प्रभावित कर लिया था। देखिये चौधरी साहब। पति की दुर्बलताएँ पत्नी से नहीं छिपी रह सकती हैं किन्तु मैंने उनमें कोई दोष नहीं देखा। उनको पास से देखती थी तो महान पाती थी और अब दूर से देखती हूँ तो और भी महान पाती हूँ।"

चौधरी साहब ने पूछा "सबसे बड़ी महानता उनमें क्या थी?"

"बतलाऊँ! केवल विद्वान होने से ही नहीं, वरन् इसलिए कि वह विद्या के निष्काम भक्त थे। वे अपनी पूजा के विशेष प्रकाश एवं वायु में रहते थे। हम स्त्रियाँ तो देखने और स्पर्श करने की वस्तु को पाये बिना पूजा करने की गहराई का पता नहीं पा सकतीं। उनकी लैबोरेटरी आज मेरी उपासना का मन्दिर हो गई है। इच्छा तो होती है कि वहाँ कभी २ धूप दीप जलाकर घण्टा तथा शङ्ख बजाऊँ, किन्तु केवल अपने पति की घृणा से डरती हूँ। जब उनकी दैनिक उपासना चल रही थी तब इन सब यन्त्र तन्त्रों को बड़ी संख्या में विद्यार्थी गण घेरे हुये खड़े रहते थे और उनसे शिक्षा ग्रहण किया करते थे। मैं भी उपस्थित हो जाती थी।"

"लड़के क्या विज्ञान में मन लगा सकते थे?"

"जो लगा सकते थे उनका चुनाव हो जाता था। मैंने ऐसे भी लड़के देखे हैं जो सचमुच में विरक्त से थे। ऐसे लड़के भी देखे हैं जो नोट लेने के बहाने से बगल के पते पर चिट्ठी लिखकर साहित्य-चर्चा किया करते थे।"

"कैसी लगती थी साहित्य चर्चा?"

"सच बतलाऊँ! बुरी नहीं लगती थी। पति कार्य से चले जाते थे और भावुकों का मन आस पास में चक्कर काटा करता था।"

"कुछ ख्याल मत कीजियेगा मनोविज्ञान का भी मैं अध्ययन करता हूँ। मेरी यह जानने की इच्छा है कि क्या उन्हें कुछ फल भी मिला करता था?"

"बताने की इच्छा नहीं होती, गन्दी हूँ मैं। दो चार जनों से जान

पहिचान हुई थी, जिनकी स्मृति हो आने पर आज भी मन में वेदना जाग्रत हो उठती है।"

"दो चार जनों से?"

"मन लोभी जो ठहरा, वह हाड़ माँस की भट्टी में लोभ की अग्नि, जो लेशमात्र भी कारण मिलने पर प्रज्वलित हो उठती है, छिपाये रखता है। मैं तो प्रारम्भ में ही बदनाम हो गई थी, सच कहने में मुझे किसी प्रकार का संकोच नहीं। हम आजन्म तपस्विनी नहीं होतीं। तड़क भड़क से रहते स्त्रियों के प्राण निकले जा रहे हैं। द्रोपदी-कुन्तियों को सीता सावित्री बनना पड़ता है। याद रखिये चौधरी साहब! एक बात कहती हूँ, छोटेपन से ही मुझे भले बुरे का ज्ञान नहीं था। किसी गुरु से तो शिक्षा मुझे मिली नहीं थी। ये ही कारण है कि बुराई में सरलता से कूद पड़ी हूँ और पार भी सरलता से हो गई हूँ। शरीर से दागी हूँ किन्तु हृदय पर कोई प्रभाव नहीं है। किसी भी वस्तु के बन्धन में मैं नहीं आ सकी हूँ। कुछ भी हो जाते समय उन्होंने अपनी चिता की अग्नि से मेरी आकांक्षाओं में आग लगा दी जिससे एकत्रित किये हुए पाप भस्म होकर रह गये हैं। इसी लैबोरेटरी में वह होमाग्नि जल रही है।

"Bravo, सच बतलाने में तुम्हारा साहस सराहनीय है।"

"सच बात पूछने वाला व्यक्ति मिले तो कहना सरल हो जाता है। आप तो बिल्कुल सरल और सच्चे हैं।"

"देखिये! पत्र लिखने वाले जिन लड़कों को तुम्हारा प्रेम प्राप्त हुआ था, क्या अब भी तुम्हारे पास आते जाते रहते हैं?"

"ऐसा करके ही तो उन्होंने मेरे मन की महानता को दूर कर दिया है। देखती हूँ कि उनका लक्ष्य मेरी 'चेकबुक' की ओर ही है। सोचा होगा स्त्रियों का मोह मिटने वाला तो है नहीं, प्रेम की सेंध लगाकर मेरे लोहे के सन्दूक के पास पहुंच जायेंगे। सम्भव है कि उनको यह विदित न हो कि मैं

इतनी रसिक नहीं। मेरा शुष्क पञ्जाबी हृदय है। देह के स्रोत में समाज के नियमों को तो मैं बहा सकती हूँ किन्तु बेईमानी तो चाहे प्राण चले जांय तब भी नहीं कर सकती हूँ। वह मेरी लेबोरेटरी का एक भी पैसा नहीं निकलवा सके। मेरे प्राण अपने देवता के भण्डार के द्वार के पत्थर को सुरक्षित किये हुए हैं। उनकी सामर्थ्य ही क्या जो वे उस पत्थर को गला सकें। जिन्होंने मुझे अपना लिया था उन्होंने गलती नहीं की।"

"उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ। यदि वे लड़के मुझे मिल जाँय तो मैं उनकी खबर भी अच्छी तरह से लूँ।"

जाने के पहिले अध्यापक सोहनी के साथ एक बार लेबोरेटरी में हो आये, कहने लगे "यहीं स्त्री बुद्धि की परीक्षा हो गई। अपने देवता के स्मृति चिन्हों से पवित्र भाव उदय हो गये।"

सोहनी ने कहा "कुछ भी कहिये, हृदय से भय नहीं निकलता। स्त्री बुद्धि विधाता को आदि सृष्टि की देन है। जब अवस्था कम होती है, मन में उमङ्ग रहती है, तब हृदय के किसी कोने में वह कहीं छिपी रहती है, ज्योंही रक्त का उबाल कम होता है त्यों ही सनातनी भाव के रूप में बुआ जी आ उपस्थित होती हैं। मेरे हृदय में इच्छा रही है कि उनसे पूर्व ही मृत्यु का आलिङ्गन कर लूँ।"

अध्यापक ने कहा "डरने की कोई बात नहीं है। मैं कहता हूँ कि ज्ञान के प्रकाश में ही तुम्हारी मृत्यु होगी।"

५

सफेद साड़ी पहिनकर अपने खिचड़ी बालों में पाउडर आदि लगाकर सोहनी ने मुख पर एक प्रकार का सात्विक भाव धारण कर लिया है। और लड़की को साथ लेकर मोटर कार में बैठ बोटेनिकल गार्डन जा पहुँची।

लड़की बसन्ती रंग की चोली और मूँगिया रंग की साड़ी पहिने हुए थी। उसके माथे पर लाल कुंकुम की बिन्दी नेत्रों में बारीक काजल की रेखा लगी हुई है। कंधे पर जूड़े का गुच्छा और पैरों में काले चमड़े पर लाल मखमल लगे हुए कामदार सैन्डल पड़े हुए है।

आकाश के समान जिस ऊँचे नीम की छाया में रेवती अपना रविवार का दिन व्यतीत करता है वहीं, उस स्थान को पहिले से ही पताकर, सोहनी उसके पास जा पहुंची। उसके पैरों में सिर रखकर उसने प्रणाम किया। रेवती चकित रह गया।

सोहनी बोली "कुछ विचार मत करना वत्स। आखिर तुम हो तो ब्राह्मण के पुत्र ही और मैं हूँ छात्र बाला। मेरे विषय में चौधरी जी से सुना होगा।"

"सुना है! किन्तु यहाँ आपको कहाँ बैठाया जाय?"

"है तो यह ताजी हरी घास, ऐसा सुन्दर स्थान अन्यत्र कहाँ मिलेगा! शायद सोच रहे होगे कि मैं यहाँ क्यों आई? आई हूँ अपने मन के भावों का प्रगट करने के लिये। तुम्हारा जैसा ब्राह्मण तो खोजने से भी नहीं मिल सकेगा।"

आश्चर्य से रेवती "बोला मेरा जैसा ब्राह्मण।"

"और नहीं तो क्या! मेरे गुरुदेव का कथन है कि ब्राह्मण तो वे ही हैं जिन्हें इस समय की सबसे उच्च विद्या का ज्ञान है।"

जाते हुए रेवती बोला "मेरे पिताजी यजमानी करते थे, मैं मन्त्र तंत्र कुछ भी नहीं जानता।"

"कहते क्या हो? तुमने जो मन्त्र सीखा है उससे सारा संसार मनुष्य के वश में हो गया है। तुम यह सोच रहे होगे कि स्त्री के मुख से ऐसी बातें कैसे कही जा रही हैं? यह पुरुष की ही देन है। यह स्वयं मेरे स्वामी ही कृपा का पुण्य प्रसाद है। उनकी साधना का जहाँ मन्दिर था, वायदा करो, तुम्हें वहाँ जाना पड़ेगा।"

"कल प्रातःकाल मुझे अवकाश है मैं अवश्य आ जाऊँगा।"

"यह देखकर कि तुम्हें पेड़ पौधों का शौक है मुझे बहुत आनन्द हुआ। मेरे पति पेड़ पौधों की खोज में बर्मा गये थे मैं भी उनके साथ गई थी, किन्तु विज्ञान की चर्चा के सम्बन्ध में नहीं।"

उसके हृदय में जैसे भाव उठा करते थे उनका अनुमान पति के चरित्र में भी किये बिना उससे नहीं रहा जाता। संदेह तो उसकी नस नस में भरा हुआ था। एक बार नन्दकिशोर जब बहुत सख्त बीमार पड़े थे तब उन्होंने उससे कहा था "मृत्यु का एक मात्र लाभ यही है कि तुम मुझे वहाँ से वापिस नहीं बुला सकती।"

सोहनी बोली "साथ तो जा सकती हूँ।"

नन्दकिशोर ने हँसकर उत्तर दिया "तब तो बे मौत मरना होगा।" सोहनी ने रेवती से कहा "बर्मा से मैं एक पौधा लाई थी। बर्मी लोग उसे 'कोआइटा निमेडा' कहते हैं। उसके पुष्प बड़े सुन्दर होते हैं। किन्तु वह यहाँ पर पनप नहीं सका।"

आज प्रातःकाल सोहनी ने पति की लाइब्रेरी में प्रथम बार यह नाम ढूढ़कर देखा है। पौधा उसने कभी आँख से भी नहीं देखा। वह उसे अपनी विद्या का प्रभाव दिखलाकर आकर्षित करना चाहती है।

यह सुनकर रेवती दङ्ग रह गया। उसने पूछा "क्या आपको इसका लेटिन नाम ज्ञात है?"

सोहनी ने अनायास ही कह दिया "मिलेटिया कहते हैं।" और फिर वह बोली "मेरे पति किसी बात को सहज रूप में ही स्वीकार नहीं करते थे, फिर भी उनमें एक अन्ध विश्वास था कि फल फूलों में प्रकृति का जो तत्व है बहुत सुन्दर है। यदि अवस्था विशेष में स्त्रियाँ उनकी ओर एकान्त रूप से ध्यान दे तो उनकी सन्तान अवश्य ही सुन्दर होगी। क्या आप भी इस बात को मानते हैं?"

यह कहना व्यर्थ है कि यह मत नन्दकिशोर का नहीं है।

रेवती ने अपना सिर खुजलाते हुए कहा" अभी तक उचित प्रमाण नहीं मिले हैं।"

सोहनी ने कहा।" कम से कम एक प्रमाण तो मुझे अपने घर में ही मिला है। मेरी लड़की ने उतनी सुन्दरता कहाँ से पाई ? मानो कि बसन्त के सुरभित पुष्पों की भाँति·········जाने दो मैं क्या कहूँ। उसे अपने ही नेत्रों से आप देख लेना।

रेवती का हृदय व्याकुल हो गया। वह उसे देखने को उत्सुक हो उठा।

सोहनी अपने ब्राह्मण रसोइया को पुजारी के वेष में सजा लाई। वह रेशमी मुकटा पहिने हुए है, माथे पर तिलक और चोटी पर पुष्प लगा हुआ है तथा गरदन में स्वच्छ जनेऊ पड़ा हुआ है।

सोहनी ने कहा "महाराजा ! अब समय तो होगया है अब नील को बुला लाइये।"

नीला को वह कमरे में बैठा आई थी। यह तय था कि बुलाये जाने पर वह डाली हाथ में लिये धीरे धीरे चली आवेगी। तब कुछ काल तक उसके पूर्ण सौन्दर्य को निरखा जा सकेगा।

इस बीच में सोहनी रेवती को अच्छी तरह से देखने लगी। रंग पीलिमा लिये हुए साँवला है। ललाट चौड़ा तथा बाल उगलियों से खिसका खिसका कर ऊँचे कर लिये गये हैं। आँखें बड़ी नहीं, तेज उनमें यथेष्ठ मात्रा में है। दृष्टि उन्ही पर जाकर ठहर जाती है। चेहरे के नीचे का भाग स्त्रियों जैसा मुलायम है। सोहनी ने रेवती के सम्बन्ध में जो कुछ भी सुना है उस पर सबसे अधिक बल इसी बात पर दिया है। "बचपन में उसके हृदय पर मित्रों की प्रेम कहानियों का प्रभाव पड़ा है। उसके

मुख पर जो एक प्रकार का माधुर्य था वह पुरुषों के हृदय में मोह उत्पन्न कर सकता था।'

सोहनी के हृदय में सन्देह उत्पन्न होगया। उसकी धारणा है कि लड़कियों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये अच्छे लगने की आवश्यकता नहीं, बुद्धि तथा विद्या की आवश्यकता नहीं। पुरुषों के लिये आवश्यक है पौरुष। यह उसकी नसों में बेतार के तार जैसी वार्ता के सदृश्य है, जो कामना की स्पर्धा के रूप में प्रकट होती रहती है।

सोहनी को अपने ऐतिहासिक, प्राथमिक रसोन्मत्त यौवन के सुनहले स्वप्नों की स्मृति सजग हो उठी जिसकी ओर वह आकर्षित हुआ था और जिसको उसने अपनी ओर आकर्षित किया उनमें न तो रूप ही था न विद्या अथवा वंश गौरव। न जाने कौन सी किस्म का ज्वर था जिसने आलस्य रूप से पुरुष रूप में संघर्ष किया था। नीला के जीवन में कब आयेगा ऐसा रंगीन समय, जो हृदय को तरंगित कर देगा उसके हृदय में यह चिन्ता हर समय लगी रहती है। जीवन के अन्तिम दिन अत्यन्त दुखदाई होते हैं, उस अवस्था में सोहनी अपने नीरव ज्ञान में खोई खोई सी थी। किन्तु दैवयोग से सोहनी का हृदय स्वभावत: उर्वर था। किन्तु सभी लड़कियों को तो विशेष ज्ञान की ओर आकर्षण नहीं होता। नीला के मन में प्रकाश पहुँचाने का कोई मार्ग नहीं था।

नीला नदी के घाट से धीरे २ आती हुई दिखलाई दी। उसके माथे तथा गालों पर धूप पड़ रही थी और उसकी बनारसी साड़ी पर जरी की रश्मियाँ झलक रही थी।

रेवती ने उसे एक ही दृष्टि में अच्छी तरह से देख लिया था। और दूसरे ही क्षण उसने अपनी आँखें नीची करलीं। बचपन से ही उसे इस प्रकार की शिक्षा मिली थी। रेवती के लिये एक ओर था सुन्दरी स्त्रियों का

दर्शन तथा दूसरी ओर था बुआ का तर्जन। इसी कारण जब उसे दृश्यामृत मिलता है तब एक ही दृष्टि में पान करना पड़ता है।

मन ही मन रेवती को धिक्कारते हुए सोहनी ने कहा "देखो! देखो! एक बार देखो तो सही।"

चौंक कर रेवती ने अपनी दृष्टि नीला की ओर करली और वह उसे देखने लगा। सोहनी ने कहा "विज्ञान के डाक्टर। देखो तो सही नीला की साड़ी के रङ्ग के साथ पत्तों के रंग का मेल कैसा सुन्दर बैठा है।"

संकोच के साथ रेवती ने कहा "बहुत ही सुन्दर।"

सोहनी ने मन ही मन कहा "व्यर्थ है।" और बोली "बसन्ती रंग तो अंदर से झाँक रहा है और गहरा नीला ऊपर से। बतलाओ तो सही किस पुष्प से इसका रंग मेल खाता है?"

उत्साहित हो रेवती ने उसे पूरी निगाह भर देखा। वह बोला "एक पुष्प ध्यान आता है, किन्तु उसके ऊपर का रंग नीला नहीं बादामी है।"

'बतलाओ! वह पुष्प कौनसा है।"

"मेलिना।" रेवती बोला।

"अच्छा समझ गई। जिसकी पाँच पँखुड़ियाँ होती हैं, एक चमकीली पीली बाकी की चार काली।"

रेवती आश्चर्य से दङ्ग रह गया। बोला "आपको फूलों की इतनी जानकारी कहाँ से प्राप्त हुई?"

हँसकर सोहनी बोली "ज्ञान होना उचित नहीं, वत्स। पूजा की डाली के पुष्प ही हमारे काम के लिये हैं, बाहर के अन्य पुष्प पर-पुरुष के ही समान हैं।"

हाथ में डाली लिए हुए नीला धीरे २ वहीं आ पहुंची। उसकी माँ ने कहा "सिकुड़ी क्यों खड़ी है? पाँव छूकर प्रणाम कर।"

"रहने दीजिये! रहने दीजिये!!" कहता हुआ रेवती स्थिर होकर खड़ा न रह सका और आलती पालती मारकर बैठ गया। पैरों को ढूढ़ने में नीला को इधर उधर टटोलना पड़ा। रेवती के तन में कम्पन हो आया।

नीला की डाली में अप्राप्य किस्म की आर्किड की मञ्जरियाँ थीं और चाँदी के थाल में बादाम की कतली, पिस्ता की बरफी, चन्द्रपुरी, खोआ की इमरती, मलाई के लड्डू और चौखूटे टुकड़ों में कटा हुआ दही।

सोहनी ने कहा 'यह सब चीजें नीला ने अपने ही हाथों से बनाई हैं।'

बिल्कुल झूठ कह रही हैं। उन सब चीजों के बनाने में न तो नीला के कभी हाथ ही चले और न मन ही लगा।

सोहनी बोली "वत्स! इनमें से कुछ खाओ। यह सब तुम्हारे लिये ही घर में बनाई गई हैं।"

आर्डर देकर बड़े बाजार की एक परिचित दूकान में बनवाई गई हैं।

हाथ जोड़कर रेवती बोला "इस समय मुझे कुछ भी खाने की इच्छा नहीं है। यदि आप आज्ञा दें तो मैं अपने घर ले जाऊँ।"

सोहनी ने कहा "अच्छी बात है रहने दो। मेरे पति को आग्रह कर के खिलाना पिलाना पसन्द नहीं था। वह कहा करते थे मनुष्य अजगर नहीं है।"

सोहनी ने एक बड़े टिफिन कैरियर में सब चीजें लगाकर रखदीं और नीला से कहा "बेटी! डाली में सब फूल अच्छी तरह से सजा दो। एक किस्म के पुष्प दूसरी किस्म में मत मिला देना। और जो रेशमी रूमाल तुम्हारे जूड़े में लिपटा हुआ है, उसे डाली के ऊपर ढक देना।"

विज्ञानी नेत्रों में कला पिपासु की दृष्टि जो कि प्राकृतिक जगत के माप के बाहर की वस्तु है, उत्कण्ठित हो उठी।

रेवती के लिये वहाँ से, जहाँ से विविध रङ्गों के पुष्पों को नीला अपनी सुन्दर और सुडौल उंगलियों से सजाने में व्यस्त थी, अपनी दृष्टि हटाना असम्भव हो गया। बीच २ में वह केवल नीला के मुख की ओर देख लेता है। उसके मुख की ओर मोती, चुन्नी, पन्ना के जड़ाऊ हार से लिपटा हुआ सुन्दर जूड़ा और बसन्ती रंग की चोली पर रंगीन किनारी की साड़ी सुशोभित हो रही थी।

मोहनी मिठाई तो सजाकर रख रही थी किन्तु उसकी दृष्टि लगी हुई थी सामने की ही ओर, जहाँ कि प्रेम का जादू, जिससे वह अनभिज्ञ नहीं थी, प्रत्यक्ष चल रहा था।

अपने पति के अनुभव के अनुसार मोहनी की यह धारणा थी कि विद्या साधना के स्थान का प्रवेश प्रत्येक मनुष्य के लिये एक समान नहीं है, जो कि उसे अच्छा नहीं प्रतीत हुआ।

दूसरे दिन मोहनी ने अध्यापक को बुलवाया और उससे बोली "मैं आपको अपने कार्य से बुलवाकर व्यर्थ ही कष्ट दिया करती हूँ। सम्भव है कि आपके कार्य का हर्जा भी कराती हूँ।"

"तुम्हें शपथ है जो शीघ्रातिशीघ्र न बुलाया करो। आवश्यक हो तो अच्छा नहीं तो और भी अच्छा।"

"आपको तो ज्ञात ही होगा कि बहुमूल्य यन्त्र एकत्रित करने की धुन में मेरे पति को अन्य कार्यों का ध्यान ही नहीं रहता था। अपने इस निष्काम काम के लोभ में मालिकों को भी धोका दे दिया करते थे। अपने

पति की धारणा, कि अखिलविश्व में ऐसी लैबोरेटरी कहीं अन्यत्र न मिले, मैंने भी अपना ली। और उसी ने मुझे जीवित रख रखा है, अन्यथा मेरा यह नशीला रक्त सड़ २ कर बह जाता। चौधरी साहब! देखिये, आप मेरे ऐसे बन्धु हैं कि मैं अपने हृदय के समस्त विकार आपके सामने प्रस्तुत कर सकती हूँ। अपने हृदय से लिपटी हुई कालिमा को दिखलाने का जब मुझे अवसर प्राप्त हो जाता है तब मेरा हृदय प्रसन्न हो जाता है।"

चौधरी साहब ने कहा "जो लोग सब बातों को जानते हैं, उनके सामने सत्य छिपाया भी नहीं जा सकता। आधा सत्य और आधा झूँठ ही लज्जा का कारण है। हम विज्ञानी हैं अतः सम्पूर्ण सत्य को ही देखने की हमारी प्रकृति है;"

"वह कहा करते थे 'मनुष्य अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने प्राण बचाना चाहता है, किन्तु प्राण फिर भी नहीं बचते। अतः जीवित रहने के श्राप को ही मिटाने के लिये वह कोई ऐसी वस्तु खोजता रहता है, जो प्राणों से भी अधिक मूल्यवान हो।' उन्हें वह अप्राप्य वस्तु अपनी विज्ञानशाला में ही प्राप्त हो गई थी। यदि मैं उनके जीवनलक्ष्य-लैबोरेटरी-को ही समाप्त कर दूँगी तो मैं स्वामी घातिनी कहलाऊँगी। इसके लिये मुझे एक रक्षक चाहिये और इसी से मैं रेवती को चाहती हूँ।"

"प्रयत्न किया था?"

"किया था। हाथों हाथ फल की भी आशा है, किन्तु फल मिलेगा नहीं।"

"क्यों?"

"जैसे ही मैं उसे अपनी ओर आकर्षित करूँगी वैसे ही उसकी बुआ उसे बचाने का प्रयत्न करेगी। सोचेगी कि अपनी लड़की ब्याहने के लिये मैं उसे बना रही हूँ।"

"इसमें क्या डोप है ? ऐसा हो जाय तो अच्छा ही है। किन्तु तुम तो कह रहीं थीं कि अन्य जाति में विवाह नहीं करोगी ?"

"तब तक मैंने आपका मन पहिचाना नहीं था। मेरी तो इच्छा बहुत थी कि रेवती को लड़की ब्याह दूँ, किन्तु अब तनिक भी इच्छा नहीं है।"

"क्यों ?"

"मेरी लड़की बहुत चञ्चल प्रकृति की है। जो कुछ भी उसके पल्ले नहीं पड़ेगा उसे वह सञ्चित नहीं रख सकती।"

"मगर है तो वह तुम्हारी ही लड़की ?"

"मेरी ही लड़की है तभी तो मैं उसकी नस नस से परिचित हूँ।"

अध्यापक ने कहा "लेकिन इस बात को भी कैसे भुलाया जा सकता है कि नारी पुरुष में भावनायें जगा सकती है।"

"मैं सब जानती हूँ। पुरुष के भोजन में मांस रखा जा सकता है किन्तु शराब रखते ही सत्यानाश की सम्भावना हो जाती है और मेरी लड़की है ऊपर तक भरी हुई शराब की सुराही।"

"तब बतलाओ। क्या करना चाहती हो ?"

"मैं जनता के हित के लिये अपनी लैबोरेटरी छोड़ जाना चाहती हूँ।"

"अपनी एक मात्र कन्या से बचाकर ?"

"कन्या को, जब मैं अपनी कन्या को ही दान कर दूँगी तब यह उससे बड़ा दान नहीं। मैं अपनी इष्ट की सम्पत्ति का प्रेसीडेन्ट रेवती को बनादूँगी। उसमें तो बुआ को कोई आपत्ति नहीं हो सकती ?"

"यदि मनुष्य को स्त्री की आपत्ति का ध्यान होता तो वह पुरुष होकर उस पर कभी अत्याचार ही नहीं करता। लेकिन मेरी समझ में एक बात

नहीं आरही है, कि यदि उससे शादी करनी ही नहीं तो उसे लैवोरेटरी का प्रेसीडेन्ट बनाने की आवश्यकता भी क्या है।"

"केवल यन्त्रों से ही क्या होगा? उसमें प्राण भरने वाला मनुष्य भी तो चाहिये। एक बात और है कि मेरे पति की मृत्यु के पश्चात एक भी यन्त्र नहीं आया है। रुपयों की कोई कमी नहीं थी किन्तु खरीदने के लिये कोई लक्ष्य भी तो सामने हो। मालूम हुआ है रेवती 'मैग्नेटिज्म' सम्बन्धी खोज कर रहा है। मैं चाहती हूँ कि उस मार्ग में संग्रह को आगे बढ़ने दिया जाय-भले ही उसमें कितना भी समय लग जाय।"

"अब मैं तुमसे क्या कहूँ! यदि तुम मनुष्य होतीं तो मैं तुम्हें कंधे पर लेकर नाचता। तुम्हारे पति ने रेलवे कम्पनी का धन चुराया है तो तुमने उनका पुरुष मन। इस प्रकार की अनोखी बुद्धि मैंने और कहीं नहीं देखी। मेरी भी सलाह लेना तुम आवश्यक समझती हो, यही आश्चर्य है।"

"इसका कारण है कि आप बिल्कुल सीधे सच्चे आदमी हो और बातें भी ठीक कहना जानते हो।"

"तुमने तो मुझे हँसा दिया। तुम से झूठ बात कहकर मैं फँसता? मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ। तो फिर अब जुट जाना चाहिये। वस्तुओं की सूची बनाना, दामों की जाँच करना, अच्छे वकील को बुलाकर तुम्हारी वस्तुओं की जाँच कराना, नियम कानून आदि बनाना बहुत से कार्य हैं।"

"इन सब कार्यों का बोझ आपके ऊपर ही रहेगा। मैं कुछ भी नहीं जानती।"

"सो तो नाम मात्र को होगा। यह तो तुम भली भाँति जानती हो कि होगा तो वही जो तुम कहोगी। मेरे लिये यही लाभ होगा कि तुम से दोनों समय सुबह शाम मिला करूँगा। मैंने तुम्हें किन निगाहों से देखा है-सो तुम जानती ही नहीं।"

सोहनी कुर्सी छोड़ झटाके से उठ खड़ी हुई और बड़ी शीघ्रता से चौधरी के गले में लिपट कर झट से उनका गाल चूम कर तुरन्त भले मानस की भाँति अपनी कुर्सी पर बैठ गई।

"लो मालूम होता है कि सर्वनाश का खेल आरम्भ हो गया।"

"यदि इस बात का भय होता तो मैं आपके पास नहीं आती। इतना पुरस्कार तो आपको कभी २ मिल ही जाया करेगा।"

"ठीक कहती हो!"

"हाँ! ठीक हो कहती हूँ। मेरा इसमें कुछ खर्च होगा नहीं और आपके चेहरे के भाव से भी यही ज्ञात होता है कि आपको भी कुछ प्राप्त नहीं होनेका।"

"अर्थात्, तुम्हारे कहने का तात्पर्य है कि यह सूखे काठ पर कठफोड़ के चोंच मारने के समान है? मैं वकील के घर जा रहा हूँ।"

"कल, एक बार तो इस मुहल्ले में आप आयेंगे ही?"

"क्यों? क्या करने?"

"रेवती के मनमें चाबी भरने।"

"और अपना मन खोने।"

"मन क्या आपके ही है?"

"तुम्हारे मन में भी कुछ शेष बचा है क्या?"

"बहुत सा बेकार पड़ा हुआ है।"

"उससे अभी बहुत से बन्दरों को नचाया जा सकता है।"

७

दूसरे दिन निश्चित समय से लगभग बीस मिनट पूर्व ही रेवती

लेबोरेटरी देखने आ गया। सोहनी तैयार नहीं थी अतः नित्यप्रति के अपने पहिनने के कपड़े पहिने हुए ही वह आ गई। रेवती समझ गया कि उससे गलती हुई है। बोला "मालूम न होता है कि मेरी घड़ी ठीक नहीं चल रही।"

सोहनी ने संक्षेप में उत्तर दिया "अवश्य।"

इतने में धीमी आवाज सुनकर रेवती मन ही मन चौंक गया और द्वार की ओर देखने लगा। सुक्खन नौकर ग्लासकेस की चाबियाँ लिये भीतर आ रहा था।

सोहनी ने पूछा "क्या एक प्याला चाय मँगवाऊ?"

रेवती ने सोचा कि हाँ कहना चाहिये। बोला "क्या हर्ज है?"

रेवती को चाय पीने की आदत नहीं थी। जुकाम होने पर वह बिल्व पत्र का कढ़ा पीलिया करता था। उसको विश्वास था कि स्वयं नीला चाय लेकर आयेगी। सोहनी ने पूछा "क्या तुम कहीं चाय पीते हो?"

चट से कह दिया "हाँ।"

उसने सोचा कि ऐसे अवसर पर 'हाँ' कहना ठीक है। चाय आगई। इसमें सन्देह नहीं कि वह कड़ी थी। स्याही का सा रंग और नीम सी कड़ुवी। चाय मुसलमान खानसामा लाया था। यह व्यवस्था भी उसकी परीक्षा के लिये ही की गई थी। उसके मुँह से कोई आपत्तिजनक आवाज नहीं निकली उसका यह संकोच सोहनी को अच्छा नहीं लगा। वह खानसाम से बोली। "मुबारक चाय बनाकर क्यों नहीं देते। ठण्डी जो हो रही है।"

वह यहाँ बीस मिनट पहिले इसलिये नहीं आया था कि खानसामा के हाथ की चाय पीवे। कितने दुख से वह चाय पी रहा था-यह वह स्वयं जानता था और सोहनी भी जान रही थी। कुछ भी हो, आखिर है तो नारी ही दुर्दशा। देखकर सोहनी से नहीं रहा गया। बोली "उस प्याले

को रहने दो, दूसरे में दूध दिये देती हूँ। साथ में कुछ मिठाई तथा फल ले लो। सबेरे सबेरे आये हो शायद कुछ खा पीकर नहीं आये होगे।"

बात सच है। रेवती ने सोचा कि आज बगीचे की पुनरावृत्ति होगी। किन्तु सोहनी ने उस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा। उस बेचारे के मुह में चाय का कड़ुआ स्वाद रह गया तथा हृदय में कसक।

इतने में अध्यापक वहाँ आ पहुंचे। कमरे में आते ही रेवती की पीठ ठोकते हुए बोले "क्यों रे! तुमको क्या होगया है, बिलकुल बर्फ सा ठण्डा होरहा है। बबुआ सा बैठा धीरे २ दूध पी रहा है क्या यह खिलौने की दुकान है जो चारों तरफ देख रहा है! जिन के नेत्र हैं वह देखा करते हैं कि महाकाल के शिष्य यहाँ ताण्डव नृत्य देखने आया करते हैं।"

ओ हो! क्यों उल्टी सीधी सुना रहे हो। क्या बिना खाये ही घर से निकल पड़े थे? यहाँ आये तो चेहरा सूखा हुआ सा मालूम हुआ।"

लो यहाँ दूसरी बुआ मिल गई। एक बूआ एक गाल पर चपत लगायेगी तो दूसरी दूसरे गाल को चूम लेगी। बीच में रहकर बेचारा लड़का भीगी बिल्ली बन जायगा। असल बात जानती हो क्या है जब लक्ष्मी अपनी गरज से आती है तो दिखलाई नहीं देती। वह तो उन्हीं के हाथ में दिखलाई देती है जो लोग सात सात देश घूम कर आते हैं! बिना माँगे वस्तु पाने के समान और कोई रास्ता नहीं। अच्छा बतलाओ तो मिसेज! जाने दो मिसेज विसेज को मैं तुम्हें सोहनी ही कहा करूँगा, चाहे प्रसन्न होना या असन्तुष्ट।"

"भला मैं नाराज क्यों होने लगी। कहिये न 'सोहनी'। 'सुही' कहें तो और भी अच्छा लगेगा।"

"गुप्त बात को मैं प्रगट रूप से कहता हूँ। तुम्हारे इस सोहनी नाम के साथ एक शब्द का और मेल खाता है जिसका बहुत ही यथार्थ अर्थ है।

सवेरे होते ही मैं किसी के हिनो हिनी शब्द के साथ खंजरी बजाना प्रारम्भ कर देता हूँ।"

"विज्ञान की खोज में परिचय कराने का आपको अभ्यास है। यह उसी का एक अनुयायी है।"

"दो वस्तुओं का तथा दो मनुष्यों का मेल तभी मिल सकता है जब बहुत से मनुष्यों के प्राण चले जाते हैं। अधिक छेड़ छाड़ भी उचित नहीं-मेल अत्यन्त निम्न वस्तु है।"

इतना कह अध्यापक ठहाका मार कर हँस दिये।

फिर बोले "नहीं! नहीं! इस बालक के सामने इन सब बातों की आलोचना करना ठीक नहीं। आज तक बारूद के कारखाने में इसने एप्रेन्टिशशिप भी शुरू नहीं की। ऐसी बुआ का हाथ इसके सिर के ऊपर है जो अपनी जिद की पक्की है।"

रेवती का स्त्रियों जैसा मुँह लाल हो गया।

"सोहनी। मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि क्या तुमने इसको अफीम खिलादी है? यह इतना क्यों ऊँघ रहा है?"

"यदि खिलाई भी हो तो अनजाने में।"

"रेबू! चल उठ यहाँ से स्त्रियों के सामने इस तरह मुँह चोर होकर नहीं रहना चाहिये। इससे इन लोगों के दिमाग बढ़ जाते हैं। ये तो बीमारी की भाँति पुरुष की केवल दुर्बलताओं पर दृष्टि रखती हैं। अवसर पाते ही अपना बुखार चढ़ा देती हैं। इस विषय का मुझको ज्ञान है इसीलिये लड़की को सावधान करना पड़ता है। मेरी भाँति के पुरुषों से, जिनके ऊपर इनकी चोटें तो पड़ चुकी हैं किन्तु वे मरे नहीं हैं, यह पाठ लेना चाहिये। रेबू! कुछ ख्याल मत करना वत्स! जो लोग चुप रहते हैं और बातें नहीं करते वे ही सबसे अधिक खतरनाक होते हैं। चल तुझे लेबोरेटरी घुमा लाऊँ।

देख अभी हाल का निकला हुआ गेलवेनोमीटर। यह परीक्षा उत्तीर्ण करने वाली नाव केलों के पत्तों से नहीं बनी है। एक बार यहाँ आसन जमाकर बैठ तो देखूँ। तुम्हारा वह गंजी खोपड़ी का प्रोफेसर, मैं उसका नाम नहीं लेना चाहता—देखूँ उसका मुँह इतना सा निकल आता है या नहीं। जब तू मेरा छात्र था तब मैंने तुझसे नहीं कहा था कि भविष्य तेरे ही सामने लटक रहा है। लापरवाही करके उसे नष्ट मत कर देना। तेरी जीवनी के प्रथम कोने में एक मेरा नाम भी छोटे २ अक्षरों में लिखा रहे, तो वही मेरी गुरु दक्षिणा होगी।"

देखते देखते विज्ञानी जाग उठा। उसके दोनों नेत्र चमक उठे। चेहरा एकदम बदल गया। मुग्ध होकर सोहनी बोली "तुम्हें जो कोई भी जानते हैं वे सभी तुम्हारे विषय में तथा तुम्हारी उन्नति के विषय में इतनी प्रशंसा करते हैं कि वह चिरकाल तक चलती रहेगी। किन्तु जितनी बड़ी आशा होती है भीतर बाहर इतनी ही बड़ी बाधा भी मिलती ही मिलती है।"

अध्यापक चौधरी ने रेवती की पीठ पर फिर एक थपकी लगा दी। उसकी पीठ झनझनाने लगी। अपने भारी गले से चौधरी बोला "देख रेवू। जिस ऐरावत को महान भविष्य वाहन होना चाहिये उसी को शक्तिशाली कोचवान बैलगाड़ी में जोत लेता है, किन्तु वह गाड़ी अचल होकर कीचड़ में ही फँसी रह जाती है। सुनती हो सोहनी! छुट्टी! नहीं नहीं, पीठ नहीं ठोकूँगा। सच सच बतलाना, मैंने बात कितने अच्छे ढङ्ग से कही है।"

"बहुत सुन्दर।"

"इसे अपनी डायरी में लिखलो।"

"अवश्य।"

"बात का अर्थ तो समझ गया, रेवू।"

"शायद नहीं समझा।"

"याद रखना, विशाल प्रतिभा का दायित्व भी विशाल ही होता है। यह तो किसी की निजी वस्तु नहीं है। इसका उत्तरदायित्व अन्तिम समय के लिये है। सुही! सुन रही हो? मैंने क्या बात कही है?"

"बहुत ही अच्छी! पुराने जमाने के राजा होते तो गले से उतार कर……"

"वे तो सब मर चुके, किन्तु……"

"किन्तु अभी नहीं मरा। याद रहेगी।"

रेवती ने कहा "डरने की कोई बात नहीं है, कोई बात मुझे दुर्बल नहीं बना सकती।" यह कहकर वह सोहनी के पैर छूने के लिये झुका किन्तु सोहनी ने उसे रोक दिया।

चौधरी ने कहा "अरे! तुमने यह क्या किया?" पुण्य कर्म न करने में दोष है और उससे भी अधिक दोष उसको लगता है जो उसमें बाधा डालता है।"

सोहनी ने कहा "चरण-स्पर्श करना ही चाहते हो तो यहाँ करो!" यह कह कर उसने पूजास्थल पर रखी हुई नन्दकिशोर की प्रतिमा दिखला दी। वहीं धूप जलरही थी और थाली में बहुत से पुष्प रक्खे हुए थे। बोली "पतितोद्धार की कथा पुराणों मे पढ़ी है। मेरा उद्धार इन्हीं महापुरुष ने किया है। बहुत नीचे झुकना पड़ा था अन्त में यह ही मुझे उठाकर बैठा सके। यह कहना तो मिथ्या होगा कि बगल में बैठाया, बगल मे नहीं अपने चरणों में बैठा लिया। विद्या के मार्ग में मनुष्य के उद्धार करने की दीक्षा मुझे इन्होंने ही दी थी। कह गये हैं, कि लड़की और दामाद का मान बढ़ाने के लिये उनके जीवन पर्यन्त के खोज किये हुए रत्नों को कूड़े के ढेर में मत फेंक देना। इसे मेरे और मेरे देश की सद्गति समझना।"

अध्यापक ने कहा "सुन लिया न रेवू ? यह ट्रस्ट की सम्पत्ति होगी और तुम्हें सौंपा जायगा इसका कार्य भार ।"

रेवती ने शीघ्रता से कहा "इस भार को संभालने की योग्यता मुझ में नहीं है । यह मुझे असम्भव प्रतीत होता है ।"

सोहनी ने कहा "आप अपना कर्तव्य पालन नहीं कर सकेंगे । छि: यह क्या पुरुषों जैसी बात हुई ?"

रेवती ने कहा "सदा से मैंने विद्याभ्यास ही किया है, कभी भी ऐसे कार्य का भार अपने ऊपर नहीं लिया ।"

चौधरी ने कहा "अण्डा फोड़ने के पहिले बतख कभी नहीं तैरी, बाद में तैरती हुई देखी गई है । तुम्हारा आवरण भी आज अण्डे के समान ही टूटेगा ।"

सोहनी ने कहा "डरो मत, मैं तुम्हारे साथ ही साथ रहूँगी ।"

आश्वासन पाकर रेवती चला गया ।

सोहनी अध्यापक के मुख की ओर देखती रही ।

चौधरी ने कहा "संसार में अनेक प्रकार के मूर्ख होते हैं । उनमें पुरुष मूर्ख ही सर्व श्रेष्ठ हैं । किन्तु, स्मरण रहे हाथों में उत्तरदायित्व लिये बगैर उसकी योग्यता कभी नहीं आती । मनुष्य के दो हाथ हैं, इसीलिये उसे मनुष्य कहा जाता है । यदि उसके दो खुर और मलने लायक पूँछ और निकल आती तो रेवती के हाथों के बजाय क्या तुम्हें खुर दिखलाई पड़ते ?"

"नहीं मुझे यह अच्छा नहीं मालूम हो रहा है । केवल स्त्रियों द्वारा ही जिनका लालन पालन हुआ है, उनके दूध के दाँत कभी नहीं टूटते । भाग्य की बात है । आपके होते हुए मैंने किसी अन्य के विषय में सोचा ही क्यों !

"सुनकर चित्त को प्रसन्नता हुई। तनिक बतलाइये तो सही कि आपने मुझ में ऐसा कौनसा गुण पाया है?"

"आप, बिल्कुल निर्लोभी हैं।"

"इतना बड़ा अपमान। क्या मुझमें लोभ नहीं है?···बहुत काफी है—"

अध्यापक के मुँह से यह बात सुनकर, सोहनी ने उनके दोनों कपोलों का चुम्बन ले लिया, और शीघ्र ही अपने स्थान पर हट आई।"

"यह कृपा किस लिये, सोहनी?"

"आपकी कृपा का ऋण चुकाना असम्भव है, केवल उसका ब्याज देती रहती हूँ।"

"पहिले दिन एक बार, और आज दो बार। क्या वृद्धि इसी प्रकार दिनों दिन होती रहेगी?"

सो वृद्धि तो होती रहेगी-ब्याज दर ब्याज के नियम से।"

८

चौधरी ने कहा "क्यों सोहनी, आखिर अपने पति के श्राद्ध में तुमने मुझे पुरोहित बना ही डाला! बड़ी मुसीबत है, भारी जिम्मेदारी ठहरी, मेरी नाव कैसे पार लगेगी? जिस मानव का अस्तित्व कहीं खोजने पर भी नहीं मिलता उसे प्रसन्न करना बहुत दुष्कर कार्य है। यह बंधे दस्तूर की तो दान दक्षिणा है ही नहीं जो मिले सो मिले।"

"आप भी तो बंधे दस्तूर के गुरू पुरोहित नहीं हैं जो आप जो भी कुछ करेंगे, वही विधि पद्धति होगी। तो क्या दान व्यवस्था तैयार कर रखी है?"

"कितने ही दिनों से मैं यही कार्य तो कर रहा हूँ। बाजार में दूकान

दूकान घूम लिया। दान की सामग्री नीचे बड़े कमरे में सजाई जा चुकी है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस लोक की आत्माएं उन्हें खाकर अति ही प्रसन्न होंगी।"

चौधरी के साथ साथ जाकर सोहनी ने देखा कि विज्ञान पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिये भाँति २ के यन्त्र तरह २ के मॉडल, नाना प्रकार की पुस्तकें, माइक्रस कोप की बहुत सी स्लाइडें तथा बायोलॉजी के बहुत से नमूने लगाकर रखे गये हैं। तथा प्रत्येक वस्तु के पास कार्ड पर उसका नाम तथा पता लिखा हुआ है। ढाई सौ विद्यार्थियों की वर्ष भर की पढ़ाई के लिये चैक लिखे तैयार हैं। खर्च के विषय में कहीं भी कोई सकोच नहीं किया गया है। बड़े २ धनी मानियों के श्राद्ध में जो दक्षिणा दी जाती है उससे उस दक्षिणा का खर्च बहुत अधिक है। किन्तु विशेषता यह है। कि उसका समारोह दृष्टिगोचर नहीं होता है।

"पुरोहित! विदाई में क्या दक्षिणा देनी होगी सो तो आपने अभी तक नहीं बतलाई।"

"मेरी दक्षिणा है तुम्हारी प्रसन्नता।"

"प्रसन्नता के साथ साथ आप के लिये रख रखा है यह क्रोनोमीटर। उन्होंने इसे जर्मनी से खरीद कर मँगवाया था, और यह उनके रिसर्च के काम में बराबर आता था।"

चौधरी ने कहा "हृदय में जो भावना उठ रही है उसके लिये भाषा नहीं। व्यर्थ बातें मैं करना नहीं चाहता। आज मेरी पुरोहिताई सार्थक हुई।"

"और एक आदमी है, जिसे मैं भूल नहीं सकती, हमारे यहाँ का मानिक उसकी विधवा बहू।"

"मानिक कौन?"

"वह था लेबोरेटरी का हेड मिस्तरी। उसका हाथ आश्चर्यजनक था।

बारीक से बारीक काम में कोई अन्तर नहीं आया, मशीन, पुर्जों का तत्व समझाने में उसकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। वह उसको घनिष्ठ साथी मानते थे। बड़े २ कारखाने दिखलाने के लिये वह उसे गाड़ी में बैठाल कर लेजाते थे। वह शराब पीता था, इसलिये उसके नीचे काम करने वाले आदमी उसकी आज्ञा नहीं मानते थे। वह कहा करते थे 'वह गुणी व्यक्ति है, उसके वह गुण मानये नहीं आ सकते और न ढूंढे ही मिलेंगे।' उनकी दृष्टि में उसका काफी सम्मान था; मेरे अन्दर जो मूल्य उन्होंने देखा, उसकी तुलना में दोष कम था। जिस स्थान पर वह मुझे पड़ी पाई वस्तु की भाँति समझते थे, उस स्थान पर उनके उस विश्वास को मैंने तनिक भी नष्ट नहीं किया। आजतक मैं अपने प्राणों से उसकी रक्षा कर रही हूँ। इतना वे और किसी से नहीं पाते थे। जहाँ मुझ में दोष थे, वे उनकी दृष्टि में नहीं आये किन्तु जहाँ मैं बड़ी थी, वहाँ उन्होंने मुझे पूरा सम्मान दिया। यदि उनकी दृष्टि में मेरा मूल्य न आता, तो आप ही बतलाइये, कि मैं किस रसातल में समा जाती। मैं बहुत बुरी हूँ, किन्तु मैं स्वयं ही कहती हूँ कि मैं बहुत अच्छी हूँ-नहीं तो वे मुझे किसी भी हालत में नहीं रोक सकते थे।"

"देखो सोहनी, मैं अहंकार के साथ ही कहूँगा, मैंने आरम्भ से ही जान लिया था कि तुम बहुत अच्छी हो। सस्ते दाम की अच्छी होती तो मुझे और आदमी चाहे जो समझता हो, स्वयं उन्होंने जो मान दिया है वह आजतक टिका हुआ है और मेरे जीवन के अन्तिम दिन तक टिका रहेगा।"

"देखो सोहनी, तुम्हें मैं जितना ही देख रहा हूँ, उतना ही समझता आ रहा हूँ कि तुम उस जाति की सहज स्त्री ही नहीं हो, जो पति शब्द सुनते ही विगलित हो जाती हो।"

"नहीं मैं वैसी नहीं हूँ। उनके अन्दर की शक्ति देखकर मैं पहिले ही दिन जान गई थी कि उनमें मनुष्यता है, मैं शास्त्रों के अनुकूल पतिव्रत

धर्म का पालन नहीं करती। मैं दृढ़ निश्चय से कह सकती हूँ कि मेरे अन्दर जो रत्न हैं, वह उन्हीं के गले की माला में लगाने योग्य था और किसी के नहीं।"

इतने में कमरे के अन्दर नीला आगई। बोली "अध्यापक जी! कुछ ख्याल मत करना। माँ से कुछ कहना है।"

अध्यापक ने कहा "बेटी ख्याल करने की कोई बात नहीं, अब मैं लैबोरेटरी में जारहा हूँ। जाकर देख आऊँ कि रेवती का काम कैसा चल रहा है।"

नीला ने कहा "डर की कोई बात नहीं। काम अच्छा ही चल रहा है। किसी २ दिन मैंने खिड़की के बाहर से ही देखा है, वह सिर झुकाए लिखते ही रहते हैं-नोट लिखा करते होंगे। कभी २ दांतों में कलम दबाकर सोचा भी करते हैं। मेरा प्रवेश तो वहाँ निषिद्ध है-इसीलिये कि कहीं मेरे कारण सर आइजक का ग्रैविटेशन हिल डुल न जाय। उस दिन माँ किसी से कह रही थी कि वह मेग्नेटिज्म सम्बन्धी खोज कर रहे हैं, वहाँ कोई जाता नहीं, विशेषतया लड़कियों के जाने से उनका काँटा हिल जाता है।"

चौधरी ठहाका मार कर हँस पड़े। बोले "पुत्री! लैबोरेटरी तो अपने ही अन्दर है, मेग्नेटिज्म सम्बन्धी काम तो वहाँ फला ही करता है। काँटे को जो हिला देती हैं, उनसे डरना ही पड़ता है। दिग्भ्रम हो जाता है न। अच्छा तो अब चल दिया।"

नीला ने अपनी माँ से कहा "मुझे अब और कितने दिन अपने आँचल में बाँधकर रखोगी, माँ। रख तो सकोगी नहीं, केवल दुःख ही पाओगी।"

"तू करना क्या चाहती है? बतला मुझे।"

नीला ने कहा "तुम्हें तो मालूम है, लड़कियों के लिये उच्च शिक्षा अध्ययन का एक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ है, उसमें तुम रुपया भी काफी दे चुकी हो। मुझे वहाँ काम क्यों नहीं करने देती ?"

"मुझे भय है कि कहीं तू ठीक से नहीं चली तो ?"

"सब तरह का चलना बन्द कर देना ही क्या ठीक चलने का रास्ता है ?"

"मुझे भी मालूम है कि ऐसी तू नहीं है और इसी बात का तो मुझे सोच है।"

"तुम स्वयं न सोचकर मुझे सोचने दो। अन्त में सोचना तो मुझे ही पड़ेगा। अब मैं दूध पीती बच्ची भी नहीं। तुम सोचती हो कि उन स्थानों में साधारण जनता के लोग भी काम करने लगे हैं अतः इसमें विपत्ति की सम्भावना है। संसार में आदमियों का आना जाना तथा काम करना कभी बन्द नहीं होगा और न तुम्हारे हाथ में ही ऐसा कोई कानून है कि तुम मुझे इन चीजों से रोक सको।".

"मैं जानती हूँ, सब जानती हूँ। डरती भी हूँ, किन्तु डरके सब कारणों को रोक नहीं सकती। तो तू उन लोगों के उच्च शिक्षा कार्य में भर्ती होना चाहती है ?"

"हाँ! मैं चाहती हूँ।"

"अच्छा ठीक है। वहाँ के एक २ अध्यापक को तू नर्क का रास्ता दिखलाकर छोड़ेगी, मुझे मालूम है। तुझे एक वचन देना होगा कि तू रेवती के पास किसी हालत में नहीं जावेगी। और न किसी बहाने से कभी लेबोरेटरी में ही जा सकेगी।"

"माँ! मेरी समझ में ही नहीं आता कि तुमने मुझे क्या समझ रखा है ? मैं उस टट्पूँजिये के पास जाऊँगी ? मरने के बाद भी नहीं।"

संकोच अनुभव करने पर जिस ढङ्ग से रेवती बगलें झाँकने लगता है, उसकी नकल करते हुए नीला ने कहा "उसकी भाँति के पुरुषों के साथ मेरा काम नहीं चल सकता। जो लड़कियाँ तुम्हारे लल्ला को जिलाये रखना चाहती हों, तो उसको वह मार भी नहीं सकती।"

"नीला तू तो बड़ा चढ़ावकर बातें कर रही है, इसी से भय लगता है कि यह तेरे मन की बात नहीं है। खैर कोई बात नहीं कि तेरे हृदय में उसके प्रति कैसे भी भाव हों, अगर तू उसे मिट्टी करना चाहेगी तो तेरे लिये ही यह अच्छा न होगा।"

"माँ! मेरी समझ में ही नहीं आता कि कब तुम्हारी क्या इच्छा होती है। उसके साथ मेरा ब्याह रचाने को तुम मुझे गुड़ियाँ बनाकर लेगई थी सो क्या मैं समझी नहीं थी? और क्या तुम मुझे उसके पास जाने आने के लिये इसलिये मना कर रही थीं कि कहीं अधिक परिचय की रगड़ लगजाने से पालिश न खराब होजाय?"

देख, नीला! मैं तुमसे कहे देती हूँ कि तेरे साथ उसका विवाह कदापि नहीं हो सकता।"

'यदि मैं मोतीगढ़ के राजकुमार से विवाह करना चाहूँ?"

"इच्छा हो तो कर लेना।"

"उसमें एक सुभीता है कि उसके तीन विवाह हो चुके हैं-मेरे ऊपर जिम्मेदारी बहुत कम रहेगी। और फिर वह शराब पीकर 'नाइट-क्लबों' में लड़खड़ाता रहता है,—उस समय भी मुझे फुरसत मिला करेगी।"

"अच्छा, ठीक है। जैसी तेरी इच्छा। किन्तु तेरा विवाह रेवती के साथ मैं कदापि नहीं होने दूँगी।"

"क्यों? क्या मैं तुम्हारे उस आइज़क न्यूटन की बुद्धि में भाँग घोल दूँगी?"

"बस बहस की आवश्यकता नहीं—जो कह दिया उसे याद रख।"

"यदि स्वयं ही वह कंगलापन करे तो ?

"तो उसे यह मोहल्ला छोड़ना पड़ेगा,—तू उसे अपने अन्न से पालना पोसना, तेरे बाप के रुपयों में से उसे एक कानी कौड़ी भी नहीं मिलेगी।"

गजब रे गजब ! तब तो द्वार से ही नमस्कार है उस आइबक को।"

उस दिन की बात चीत यहीं समाप्त होगई।

६

"चौधरी साहब और तो सब ठीक चल रहा है, किन्तु लड़की की दुश्चिन्ता मुझे खाये जा रही है। मेरी समझ में ही नहीं आता कि वह क्या कर रही और किस ताक में किधर फिर रही है ?"

चौधरी ने कहा "और फिर उसके पीछे कौन किस ताक में फिर रहा है, यह भी तो चिन्ता का विषय है। हुआ क्या, उधर कुछ दिनों से चारों ओर एक ही अफवाह फैली हुई है कि तुम्हारे पति ने लैबोरेटरी की रक्षा के लिये अथाह रुपया छोड़ा है। लोगों की जबनों पर उसकी संख्या बढ़ती ही चली जा रही है। अब तो हालत यह है कि बाजार में राज्य और राज्य कन्या के विषय में सट्टा लगना आरम्भ हो गया है।"

"इसका तो मुझे पूरा भरोसा है कि राजकन्या तो मिट्टी के ही मोल बिकेगी, किन्तु मेरे जीते जी राज्य सस्ते में नहीं बिक सकता।"

"किन्तु लोगों का आयात जो आरम्भ हो गया है। उस दिन सहसा क्या देखता हूँ कि हमारे यहाँ के अध्यापक मजूमदार सिनेमा से नीला के हाथ में हाथ दिये निकल रहे हैं। मुझे देखते ही उन्होंने दूसरी ओर गरदन फेर ली। लड़का अच्छे अच्छे विषयों पर भाषण देता फिरता है। देश हित के विषय पर बोलते २ उसकी वाणी में अनायास ही जोश आ जाता है। किन्तु उस दिन उसकी टेढ़ी गरदन देखकर मुझे स्वदेश की चिन्ता होने लगी।"

"चौधरी साहब! हुक्का तो टूट चुका है।"

"टूट तो चुका है। अब इस गरीब को अपना सामान लादना पड़ेगा।"

"मजूमदारों के मुहल्ले में महामारी चलती है तो चलने दो। मुझे डर है तो केवल रेवती का।"

"फिलहाल कोई डर नहीं; गहराई में डूबा हुआ है और काम भी अच्छा ही कर रहा है।"

"चौधरी साहब सब ठीक है, एक बात में वह कुछ नहीं जानता। वह विज्ञान में भले ही दक्ष हो, किन्तु जिसे तुम 'मैट्रिपार्की' कहते हो उस राज्य में उसके लिये प्रबल भय है।"

"तुम्हारा कहना ठीक है उसके तन में अभी टीका एक भी बार नहीं लगा। यदि छूत की बीमारी प्रारम्भ हो गई तो उसे बचाना कठिन हो जायगा।"

"आपको उसे देखने के लिए नित्य एक बार जाना पड़ेगा।"

"परन्तु कहीं और से वह छूत न ले आवे, मुझे इस अवस्था में बे मौत न मरना पड़े। डर मत जाना आखिर हो तो तुम स्त्री न, फिर भी आशा करता हूँ कि तुम मजाक समझती हो। मैं तो उस छूत के मोहल्ले से पार हो आया हूँ और मुझे तो छू जाने पर भी छूत नहीं लगती। किन्तु एक और मुश्किल आ गई है कि परसों मुझे मुजरानवाला जाना है।"

"क्या यह भी मजाक है? स्त्री जाति पर दया कीजिये।"

"मजाक नहीं! मेरे सहपाठी अमूल्यचन्द्र अड्डी वहाँ के सिविल सर्जन थे। बस पन्द्रह साल से वहाँ प्रेक्टिस भी कर रहे थे। कुछ सम्पत्ति इकट्ठी की थी। अचानक उनका हार्टफेल हो गया, स्त्री पुत्रादिकों को छोड़कर वह उस लोक सिधार गए। सब जमीन जायदाद बेचकर, लेना देना चुकाकर,

उन लोगों का उद्धार करके यहाँ लाना पड़ेगा। ठीक नहीं कह सकता कि दिन कितने लग जायेंगे।"

"इस विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता?"

"साहनी, संसार में किसी के भी विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। निर्भय होकर कहो 'जो होना है वह होकर ही रहेगा।' जो लोग भाग्य मानते हैं, वह गलती नहीं करते। हम विज्ञानी भी कहा करते हैं 'अनिवार्य में एक बाल बराबर भी अन्तर नहीं आ सकता'। जब तक कुछ करने का हो तब तक तो करो और जब किसी भी भाँति कुछ न कर सको तो बोलो 'भाग्य'।"

"अच्छा! ठीक है।"

जिस मजूमदार की मैंने बात कही है वह उस दल में उतना खतरनाक नहीं। दल वाले अपनी इज्जत बचाने की गर्ज से उसे मिलाये रखना चाहते हैं। और जिन लोगों की बात सुनी है, चाणक्य के मतानुसार, उनसे सौ हाथ दूर रहने पर भी भय बना ही रहता है। एक बाँके बिहारी भटनी है, उसका आश्रय लेना तथा आलिंगन पाश में बँधना दोनों ही एक समान है। धनी विधवा का नया रक्त उनको बहुत पसन्द है। एक खबर पहिले से ही सुनलो, यदि कुछ करना चाहो तो करना और अन्त में मेरी फिलासफी भी याद रखना।"

"देखिये। चौधरी साहब, आप अपनी फिलासफी अपने ही पास रखिये। मैं आपके अदृष्टवाद को नहीं मानती और यदि मेरी लैबोरेटरी पर किसी का हाथ पड़ा तो आपके इस विधान को भी स्वीकार नहीं करूँगी। मैं पंजाब की औरत हूँ—कटार का और मेरा चोली दामन का साथ है, वह बड़ी आसानी से मेरे हाथों में खेलती है। मैं खून कर सकती हूँ फिर चाहे वह मेरी लड़की पर जमाई पद का उम्मीदवार।"

उसकी साड़ी के नीचे कमर बन्द छिपा हुआ था, उसमें से झट से एक

चमकदार छुरी निकालकर उसने दिखला दी। बोली 'उन्होंने मुझे अपने लिये चुनकर ग्रहण किया था। मैं बंगाली लड़की नहीं-प्रेम के लिये केवल आँसू बहाकर जीवन बरबाद नहीं करती। प्रेम के लिये मैं प्राण दे सकती हूँ और ले भी सकती हूँ। एक ओर मेरी लैबोरेटरी है और दूसरी ओर मेरा कलेजा। इन दोनों के बीच में यह छुरी है।"

चौधरी ने कहा "किसी जमाने में मैं कविता लिख लिया करता था। आज फिर ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भव है लिख सकता हूँ।"

"आप कविता लिखना चाहें तो लिख लिया कीजियेगा। किन्तु आप अपनी फिलॉसफी वापिस ले लीजिये। जो मानने योग्य नहीं है उसे मैं अन्त तक नहीं मानूंगी। अकेली खड़ी खड़ी लड़ूँगी और छाती फुला फुला कर कहूँगी, मैं जीतूँगी ही जीतूँगी।"

ब्रैवो, मैंने अपनी फिलासफी वापस लेली और अब से तुम्हारी विजय के ढोल पीटता फिरूँगा। फिल हाल कुछ दिनों के लिये मैं विदा लेता हूँ, लौटने में विलम्ब नहीं होगा।''

आश्चर्य की बात है कि सोहनी के नेत्रों में आँसू छलछला आये। उसने कहा "कुछ ख्याल न कीजियेगा।'' और झट से वह चौधरी के गले से लिपट गई और कहने लगी "संसार में कोई बन्धन स्थिर नहीं रहता, यह भी एक क्षण के लिये है।"

इतना कहकर सोहनी ने अध्यापक का गला छोड़ दिया, और पैरों में पड़कर प्रणाम किया।

१०

समाचार पत्रों में जिसे 'परिस्थिति' कहा जाता है, वह सहसा ही अपने दलबल सहित आ उपस्थित होती है। जीवन की कहानी सुख दुख पर अवलम्बित रहती है, अन्तिम अध्याय में अनायास ही 'कोलिज़न"

होता है और तब वह चूर चूर होकर स्तब्ध हो जाती है। विधाता अपनी कहानी को गढ़ते तो हैं एक सुनार की भाँति—धीरे धीरे और तोड़ डालते हैं एक ही चोट में लोहार की भाँति।

सोहनी की नानी का जो अम्बाला में रहती है, एक तार मिला है 'यदि मुँह देखना चाहती हो तो शीघ्र चली आओ।'

उसके निकट सम्बन्धियों में से एक उसकी यही नानी जीवित बची है। नन्दकिशोर सोहनी को इसी से खरीदकर लाये थे।

माँ ने नीला से कहा "तुम भी मेरे साथ चलो।"

नीला बोली "मैं कदापि न जाऊँगी।"

"क्यों? क्या बात है?"

"उन लोगों ने मेरे अभिनन्दन की तैयारी कर ली है।"

"उन लोगों से क्या अभिप्राय है? वे लोग कौन हैं?"

"जागरण क्लब के सदस्य। डरो मत, बहुत शरीफ क्लब है। सदस्यों की सूची देखते ही समझ लोगी। बिल्कुल चुने हुए पाओगी।"

"क्लब का क्या उद्देश्य है?"

"कहना कठिन है, और उद्देश्य तो क्लब के नाम से ही विदित हो सकता है। इसके नाम में आध्यात्मिक, साहित्यिक, आर्टिस्टिक सभी अर्थ बहुत गहराई तक छिपे हुए हैं। नवकुमार बाबू ने बहुत ही सुन्दर व्याख्या की थी। उन लोगों ने तुमसे चन्दा लेने आने का निश्चय किया है।"

"किन्तु मैं देखती हूँ कि चन्दा तो लेकर सब समाप्त कर दिया। तुम सोलहो आने उनके हाथ में पड़ चुकी हो। मेरे लिये जो त्याज्य था, उन्होंने उसी को ग्रहण किया है। वे लोग अब मुझसे और कुछ भी पाने की आशा न करें।"

"माँ! इतनी क्रोधित क्यों हो रही हो? वे देश की सेवा निस्वार्थ भाव से करना चाहते हैं।"

"अच्छा, अब इस बहस को समाप्त करो। अब तक तुम्हें अपनी मित्र मण्डली से पता चल गया होगा कि तुम स्वाधीन हो!"

"हाँ! चल गया है।"

"उन निःस्वार्थियों ने तुम्हें यह भी बतला दिया होगा कि पिता की छोड़ी हुई सम्पत्ति में तुम्हारे लिये जो नगद रुपया है, उसे तुम अपनी इच्छानुसार व्यवहार में ला सकती हो?"

"हाँ। बतला दिया है।"

"और मैंने सुना है कि उनके वसीयतनामे को 'प्रोवेट' लेने के लिये तुम सब मिलकर प्रयत्न कर रहे हो। क्या यह सच है?"

"हाँ, सच है। बाँके बाबू मेरे सालिसिटर हैं।"

"उन्होंने तुम्हें कुछ और भी आशा और परामर्श दी है।"

नीला चुप रह गई। यदि मेरी सरहद में पैर रखा तो मैं तुम्हारे बाँके बाबू को, कानूनी या गैर कानूनी किसी भी तरीके से, साफ कर दूँगी। लौटते समय मैं पेशावर होकर आऊँगी। लैबोरेटरी में पहरा देने के लिये मैं चार सिख सिपाहियों को नियुक्त किये जाती हूँ। और जाते समय तुम्हें यह भी दिखलाए जाती हूँ कि मैं पंजाब की लड़की हूँ।"

इतना कहकर उसने कमर बन्द से छुरी निकालकर दिखलाई; और कहा "यह छुरी न तो लड़की को जानती है" और न लड़की के सॉलिसिटर को। समझीं! इसकी स्मृति तुम्हारे लिये छोड़े जाती हूँ। लौटकर आने पर यदि समय रहा तो हिसाब लूँगी, छोड़ूँगी नहीं।"

११

लैबोरेटरी के चारों ओर बहुत सी खुली ज़मीन छोड़ दी गई है। यह व्यवस्था इसलिये की है ता कि कोई शब्द या किसी भी प्रकार का कम्पन लैबोरेटरी के कार्य में बाधा न डाल सके। कार्य की तन्मयता में

यह निस्तब्धता रेवती को सहायता पहुँचाती है। इसी से वह अकसर यहाँ रात को काम करने आता है।

नीचे की घड़ी में दो बज गए। खिड़की के बाहर आकाश की ओर दृष्टि किये हुए रेवती अपने विषय में विचारमग्न था।

इतने में दिवाल पर किसी की छाया दिखलाई दी। मुख फिराकर देखा-तो रात की पोशाक में नीला महीन सिल्क की ढीली कमीज और साया पहिने हुए खड़ी है।

चौंककर रेवती अपनी कुर्सी से उठने को ही था, कि इतने में नीला उसके गले में बाँह डालकर गोदी में आ बैठी। रेवती का सारा शरीर काँपने लगा, और हृदय धड़कने लगा। और गद् गद् कण्ठ से कहने लगा "जाओ। जाओ इस कमरे से बाहर चली जाओ।"

नीला ने कहा "क्यों ?"

रेवती ने कहा "मुझसे सहा नहीं जाता। तुम यहाँ क्यों चली आईं ?"

नीला ने उसे अधिक जोर से दबाते हुए कहा "क्यों ? क्या तुम मुझे प्यार नहीं करते ?"

रेवती बोला "अवश्य करता हूँ, किन्तु तुम यहाँ से चली जाओ

सहसा पंजाबी पहरे वाला भीतर चला आया। उसने तिरस्कार पूर्ण स्वर में कहा "भाई जी ! बहुत शरम की बात है, आप निकल जाइये यहाँ से।"

रेवती ने चेतन-मन के अगोचर में न जाने कब बिजली की घण्टी का बटन दबा दिया, उसे पता ही नहीं चला।

पञ्जाबी सिपाही ने रेवती से कहा "बाबू सोन, बेईमानी मत करो।"

रेवती ने नीला को बल पूर्वक ढकेल दिया और वह स्वयं कुर्सी से उठ कर खड़ा हो गया।

दरबान ने नीला से कहा "आप बाहर जाओ, नहीं तो हमको अपनी मालकिन का हुकुम तामील करना होगा।"

अर्थात, बलपूर्वक अनादर के साथ निकाल बाहर करेगा।

बाहर जाते समय नीला ने कहा। "सुनते हैं, आइजक न्यूटन? हमारे यहाँ ठीक चार बजकर पैंतालीस मिनट पर आपका चाय का निमन्त्रण है। सुन रहे हैं? गफलत में है क्या?" कहती हुई वह एक बार फिर उसकी ओर मुड़कर खड़ी हो गई।

उसने नम्रता पूर्वक उत्तर दिया "सुन लिया।"

रात की पोशाक में नीला के सुन्दर, सुडौल बदन का गठन संगमरमर की मूर्ति के समान नयनाभिराम रूप से प्रस्फुटित होने लगा। और रेवती के मुग्ध नेत्र उसे देखे बिना न रह सके। नीला चली गई। टेबिल पर मुँह रखे रेवती पड़ा रहा। ऐसे आश्चर्यजनक सौन्दर्य की वह कल्पना भी नहीं कर सकता था। उसकी नस २ में एक प्रकार की बिजली सी दौड़ गई, और किंकर्तव्य विमूढ़ वह अग्निधारा में चक्कर लगाने लगा। अपने आपसे प्रश्न करता हुआ रेवती हाथ की मुट्ठी बांधकर मन ही मन कहने लगा "नहीं जाऊँगा! नहीं जाऊँगा!! नहीं जाऊँगा!!!" सहसा देखा कि उसकी टेबिल पर गहरे लाल रङ्ग का एक रूमाल पड़ा है और उसके कोने पर कढ़ा हुआ है "नीला"। वह रूमाल उसने अपने मुँह से दबा लिया। उसके शरीर में एक नशा सा दौड़ गया और दिमाग सुगन्धि से भर गया।

कमरे में नीला फिर आ गई। बोली "एक काम है, भूल गई थी।"

दरबान ने रोकने की चेष्टा की। "डरो मत। मैं चोरी करके नहीं आई।" नीला बोली। और उसने रेवती से कहा। "केवल हस्ताक्षर चाहिये। तुम्हारा नाम देश भर में प्रसिद्ध है उसीसे तुम्हें जागरण क्लब का प्रेसीडेन्ट बनाना है।"

अत्यन्त संकुचित होकर रेवती ने कहा "मैं उस क्लब के विषय में कुछ भी नहीं जानता।"

"जानने की आवश्यकता भी नहीं है। इतना जानना ही पर्याप्त होगा कि बृजेन्द्र बाबू उसके पेट्रन हैं।"

मैं तो बृजेन्द्र बाबू को नहीं जानता।"

"इतना जानने से काम चल जायगा कि वह मेट्रोपोलिटन बैङ्क के डायरेक्टर हैं। मेरे प्यारे हो न, मेरे कण्ठ की सौगन्ध है। हस्ताक्षर ही तो करना है।"

इतना कहकर नीला ने अपना दाहिना हाथ रेवती के कन्धे पर रख, उसका हाथ पकड़ कर कहा "करिये हस्ताक्षर।" रेवती ने स्वप्नावस्था की भाँति हस्ताक्षर कर दिये।

जब कागज लेकर नीला उसकी तह कर रही थी, तब दरबान ने कहा "यह कागज हमको दिखाना होगा।"

नीला ने कहा "इसे तो तुम समझ भी न पाओगे।"

दरबान ने कहा "समझने की जरूरत नहीं।" और कागज छीन कर टुकड़े २ कर डाला। बोला "दस्तावेज बनाना हो तो बाहर जाकर बनाओ। यहाँ नहीं।"

रेवती ने साँस लेते हुए मन में कहा "जी गया।" दरवान ने नीला से कहा "भाईजी अब चलो हम आपको घर पहुँचा देता है।"
और वह नीला को वहाँ से लेगया।

कुछ देर बाद फिर पंजाबी पहरेदार अन्दर आया। बोला "हम चारों तरफ से सब दरवाजा बन्द रखते हैं फिर भी वह अन्दर कैसे आजाती है? मालूम होता है आप दरवाजा खोल देता है।"

यह कैसा सन्देह! इतना अपमान। रेवती ने कितनी ही बार कहा "मैंने दरवाजा नहीं खोला।"

"तो फिर वह अन्दर कैसे आई ?"

बात तो ठीक ही मालूम होती है। वैज्ञानिक चारों ओर घूम २ कर रहस्य की खोज करने लगे।

अन्त में उन्होंने देखा कि सड़क की ओर की एक खिड़की की चटखनी जो अन्दर से बन्द रहती है, दिन में किसी ने खुली छोड़ दी थी। रेवती में ऐसी धूर्त बुद्धि हो सकती है, उसके प्रति दरबान को ऐसा सन्देह नहीं था। वह समझता था कि बेवकूफ आदमी है, पढ़ना लिखता है, इसमें अधिक शक्ति और उसमें क्या हो सकती है। अन्त में दरबान ने माथे पर हाथ ठोंकते हुए कहा "स्त्री की जाति है। बाबू ! बड़ी शैतान है।"

उस थोड़ी सी बची हुई रात में रेवती बार २ अपने आप मन ही मन सोचता रहा कि वह चाय के निमन्त्रण में नहीं जायगा।

कौए बोल उठे। रेवती घर चला गया।

१२

दूसरे दिन देखा गया कि रेवती ने समय की पाबन्दी में जरा भी ढील नहीं की। चाय की सभा में वह ठीक चार बजकर पैंतालीस मिनट पर पहुँच गया। उसने सोचा था कि सभा एकान्त में होगी और वे ही दो व्यक्ति रहेंगे। फैशनेबुल पोशाक तो वह कभी पहिनता ही नहीं था, केवल धोती और कुरता ही पहिनकर आया है, कंधे पर तह की हुई चादर पड़ी है। यहाँ आकर उसने देखा कि सभा बगीचे में हो रही है। अपरिचित शौकीन व्यक्तियों की उसमें भीड़ है। यह दृश्य देखकर उसका हृदय अन्दर से विचलित हो गया और प्रयत्न करने लगा कि यदि कहीं छिप सके तो छिप जाय। अन्त में एक कोने में बैठने का प्रयत्न करते ही सब के सब उठकर खड़े होगये और कहने लगे "आइये ! आइये डाक्टर भट्टाचार्य ! आपका आसन इस स्थान पर है !"

मखमल लगी सिराहनेदार एक ऊँची कुर्सी सभा के मध्य में थी। नीला ने आकर उसके गले में माला पहिना दी और माथे पर चन्दन का तिलक लगा दिया।

बृजेन्द्र बाबू ने प्रस्ताव किया कि सभा के सभापति पद को सुशोभित करने के लिये डा० भट्टाचार्य से प्रार्थना की जाये। बाँके बाबू ने इसका समर्थन किया, चारों ओर से तालियों की गड़ गड़ाहट होने लगी। साहित्यिक हरिदास बाबू ने डा० भट्टाचार्य की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पर संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित भाषण दिया और उन्होंने कहा "हमारे जागरण क्लब की तरणी, रेवतीबाबू के नाम के पाल में हवा भर पश्चिमी समुद्र पार कर विश्व के कोने २ में जागरण का सन्देश पहुंचावेगी।"

सभा के व्यवस्थापक ने रपोर्टरों के कानों में जाकर कहा "रिपोर्ट में उपमाएँ सब अवश्य लिखियेगा, कोई रह न जाय।"

जब वक्तागण उठ उठकर यह कहने लगे कि इतने समय के पश्चात् डा० भट्टाचार्य ने भारत माता के ललाट पर विज्ञान का जयतिलक अंकित कर दिया है तब रेवती ने अपने आपको, सभ्य जगत के मध्य, प्रकाशमान पाया। इससे उसका हृदय गद्गद् हो गया। जागरण समिति के विषय में उसने जितनी गलत अफवाहें सुनी थीं, उन सबका वह मन ही मन प्रतिवाद करने लगा। जब हरिदास बाबू ने यह कहा कि इसके उद्देश्य कितने महान हैं, यह इसी बात से समझा जा सकता है कि इस समिति की रक्षार्थ रेवती बाबू का नाम ढाल के रूप में उपस्थित किया जा रहा है, तब रेवती अपने नाम का गौरव और उत्तरदायित्व अत्यन्त प्रबलता से अनुभव करने लगा। संकोच का पर्दा उसके चित्त से कतई हट गया। अपने मुँह की सिगरेट हाथ की उगलियों में लिये हुए नवयुवतियाँ रेवती की कुर्सी पर झुक पड़ीं। और मधुर मुस्कान से कहने लगीं "हम आपको परेशान कर रही हैं, किन्तु एक आटोग्राफ तो आपको देना ही होगा।"

रेवती को ऐसा भास हुआ कि अभी तक वह स्वप्निल संसार में घूम रहा था-अब स्वप्न का कोष फट पड़ा है और उसके फटते ही तितलियाँ बाहर निकल आई हैं।

एक एक कर सब चले गये।

रेवती के हाथ पकड़ते हुए नीला बोली"आप नहीं जाइयेगा।"

उसकी नसों में ज्वाला भरी मदिरा सी उत्पन्न हो गई। दिन का उजाला समाप्त हो गया। अन्धकार की काली किरणें सम्पूर्ण धारा पर छा गई है। दोनों ही बेञ्च पर पास २ सट कर बैठ गये। अपने हाथ पर रेवती का हाथ रखते हुए नीला बोली "डा० भट्टाचार्य! आप पुरुष होकर स्त्रियों से इतना क्यों डरते हैं?"

स्पर्धा से रेवती ने कहा "डरता हूँ! कदापि नहीं।"

"मेरी माँ से आप नहीं डरते?"

"डरने क्यों लगा, श्रद्धा करता हूँ।"

"मुझ से?"

"आपसे अवश्य डरता हूँ।"

"यह समाचार अच्छा है। माँ! कहती हैं कि वह मेरी शादी आपके साथ किसी भी हालत में करने को तैयार नहीं हैं। यदि, ऐसा हुआ तो मैं आत्म हत्या कर लूँगी।"

"हम लोगों की शादी होकर ही रहेगी। मैं किसी भी बाधा से पीछे नहीं हटने का।"

नीला ने, रेवती के कंधे पर माथा रखकर, कहा "शायद आप नहीं जानते कि मैं आपको कितना चाहती हूँ।"

नीला के माथे को अपने वक्ष से और भी चिपटाते हुए रेवती ने कहा "कोई ऐसी शक्ति नहीं जो मेरे पास से तुम्हें छीन सके।"

"जाति ?"

"छोड़ दूँगा जाति को।"

"तो रजिस्ट्रार के पास से कल ही नोटिस देना होगा।"

"कल ही दूँगा, अवश्य ही दूँगा।"

रेवती ने पुरुषों के समान तेजी दिखाना प्रारम्भ किया। परिणाम बड़ी तेजी से सामने आने लगा।

उधर सोहनी की नानी के लकवे के लक्षण दिखलाई देने लगे हैं। अभी तक तो उनकी मृत्यु का सन्देह मात्र था, किन्तु अब वह सन्देह सम्भावना में परिवर्तित हो गया। और जब तक वह मर न जाय तब तक वह सोहनी को छोड़ने की नहीं। इन सुनहले दिवसों को निहार कर नीला का हृदय उत्फुल्लित हो उठा।

बुद्धिमानों का ऐसा अनुमान है कि पाण्डित्य के दबाव से रेवती का पौरुष का चमत्कार फीका पड़ गया है। नीला उसे अधिक पसन्द नहीं करती। उससे विवाह करना निरापद है। विवाह कार्य में बाधा देने की सामर्थ्य उसमें नहीं है। केवल इतना ही नहीं तो लैबोरेटरी के साथ जो लोभ की इच्छा बनी हुई है उसका परिणाम भी बहुत अधिक है। उसके हितैषियों का भी यह मत है कि लैबोरेटरी का कार्य भार सँभालने को रेवती से अधिक योग्य और कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा और सोहनी उसे किसी भी अवस्था में छोड़ नहीं सकती।

सहयोगियों का इस प्रकार का आश्रय शिरोधार्य करके रेवती ने संवाद-पत्रों में जागरण क्लब की अध्यक्षता का संवाद छपवा दिया।

जब नीला उससे कहती 'भीतर ही भीतर डर लग रहा होगा' तब वह उसे उत्तर देता 'मैं किसी की परवाह नहीं करता' उसे यह धुन थी कि उसके पुरुषार्थ में किसी को भी उसके प्रति तनिक भी सन्देह न रहे। वह कहता था 'डिंगटन के साथ मेरा पत्र व्यवहार होता है, किसी दिन निमन्त्रण देकर

मैं उन्हें इस क्लब में बुलाऊँगा।' क्लब के सदस्य कहते 'धन्य हैं।

रेवती का वास्तविक कार्य समाप्त हो गया है। उसका समस्त चिन्तन सूत्र छूट गया है। हृदय की प्रत्येक धड़कन यही कहती है कि नीला कब आवेगी? अचानक पीछे से आकर आँखें बन्द कर देगी? कुर्सी के हत्थे पर बैठकर बाँया हाथ उसके गले में डाल देगी? अपने हृदय को वह यही कहकर सन्तोष देता रहता है कि उसका यह काम जो रुका पड़ा है क्षणिक है। कुछ ही दिनों में वह उसे अपनी पुरानी गति से करने लगेगा। किन्तु स्थिर होने के लक्षण शीघ्र नहीं दिखलाई पड़ते। नीला के हृदय में यह सन्देह भी नहीं कि उसके काम की हानि से संसार की हानि हो रही है। जो कुछ भी हो रहा है, वह तो उसे, एक प्रहसन मात्र समझती है।

यह उलझन भरी समस्या नितप्रति बढ़ती ही चली जा रही है। जागरण समिति ने रेवती को बुरी भाँति जकड़ लिया है और वह उसे चिन्ताग्रस्त मनुष्य बनाये दे रही है। अभी तक उसके मुख से कोई अनुचित बात निकलती तो नहीं थी, किन्तु उसे मन ही मन कहकर वह जोर से हँस देता था। वास्तव में उन लोगों के लिए डा० भट्टाचार्य एक बड़े आनन्द की वस्तु बन गया है।

कभी २ रेवती को तब ईर्ष्या भी होने लगती है जबकि बैंक के डायरेक्टर के मुँह की चुरुट से नीला अपना चुरुट जला लेती है। और उसकी नकल करना रेवती के लिए बिल्कुल असाध्य है क्योंकि उसके गले में चुरुट के धुँए के आने से उसका सिर चकराने लगता है; किन्तु यह दृश्य उसके मन तथा शरीर को बहुत अधिक अस्वस्थ कर देता है। इसके अतिरिक्त नाना प्रकार की अड़चनें और वैमनस्य चलते रहते हैं तो उससे विरोध प्रगट किये बिना नहीं रहा जाता।

नीला कहती "इस शरीर पर मुझे कुछ मोह नहीं, हमारे लिए इसकी कोई कीमत नहीं। प्रधान कीमती वस्तु है प्रेम। क्या मैं उसे अन्यों को बाँट सकती हूँ?" इतना कहकर वह रेवती का हाथ दबा देती है।

तब रेवती अन्यों को नीला के प्रेम का अपात्र समझकर भीतर ही भीतर फूला नहीं समाता। सोचता है कि यह लोग गोले के छिलके ही से प्रसन्न हैं, इन नासमझों को गोले की गिरी तो मिली ही नहीं।

लैबोरेटरी के फाटक पर पहरा रात दिन लग रहा है, अन्दर अधूरा काम पड़ा हुआ है, किसी के दर्शन ही नहीं प्राप्त होते।

१३

ड्राइंग रूम में सोफे पर पैर रखे गद्दीदार कुर्सी पर नीला बैठी है और जमीन पर उसके पैरों के पास सोफे से पैर टेके हुए बैठा है रेवती, इसके हाथ में लिखे हुए फुलस्केप साइज के कुछ कागज हैं।

रेवती ने सिर हिलाते हुए कहा "इसकी भाषा बहुत बढ़ा चढ़ाकर लिखी हुई है। इतना बढ़ा चढ़ाकर कहने में मुझे बड़ी लज्जा अनुभव होगी।"

"भाषा के बड़े भारी ज्ञाता हो न तुम? यह कैमिस्ट्री का फारमूला तो है नहीं। आना कानी मत कीजिये, कण्ठस्थ कर डालिये। मालूम है यह किसने लिखा है? इसके लिखने वाले साहित्यिक हमारे प्रमदा रञ्जन बाबू हैं।"

"इतने बड़े २ वाक्यों और सब शब्दों को कण्ठस्थ कर लेना मेरे लिये बहुत कठिन है।"

"कठिनाई इसमें क्या है? कुछ नहीं! तुम्हारे सामने ही पढ़ते पढ़ते मुझे सब याद हो गया। — मेरे जीवन के सर्वोत्तम शुभ मुहूर्त में जागरण समिति ने इन्द्रपुरी के समान मुझे अपने मनोरथ पूर्ण करने का सौभाग्य प्रदान किया है। फ्रैण्ड! तुम डरो मत मैं तुम्हारे पास ही बैठी रहूँगी और धीरे धीरे सब बतलाती भी रहूँगी।"

"मुझे साहित्यिक भाषा अच्छी तरह से नहीं आती, इसलिये मुझे

ऐसा अनुभव होता है कि इस सम्पूर्ण निबन्ध की लेखन शैली मेरा परिहास कर रही है। मुझे अँग्रेजी में बोलने दीजिये। वह मेरे लिये अति सुगम और सरल कार्य रहेगा!

Dear friends, allow me to offer you my heartiest thanks for the honour you have conferred upon me on behalf of the Jagaran Club, the greatest awaker—इत्यादि-बस ऐसे दो चार वाक्य कह देना ही काफी है?"

"नहीं! नहीं! ऐसा नहीं होगा,—तुम्हारे मुख से बंगाली भाषा बहुत भली मालूम होगी, इस प्रकार कि हे, बंग देश के तरुण सम्प्रदाय, हे स्वाधीनता रथ के चालक, सारथी, हे पराधीनता की बेड़ियों को छिन्न विच्छिन्न करने वाले पथ के महान पथिक—कुछ भी कहिये, भला अँग्रेजी में यह सब बातें इतनी अच्छी कैसे लग सकती हैं। तुम्हारे जैसे विज्ञान विशारद व्यक्ति के मुँह से मातृभाषा में जब इस प्रकार के सारगर्भित शब्द सुने जायेंगे तो तरुण बङ्गाली सर्प की भाँति फन उठाकर झूमने लगेंगे। अभी काफी समय है—पढ़ो, पढ़ो, मैं भी साथ साथ ही पढ़ती हूँ।"

इतने में बैंक मैनेजर अजेन्द्र बाबू हालदार साहबी पोशाक में बूट चमचमाते हुए, अपने भारी भरकम लम्बे शरीर द्वारा सीढ़ियों से आवाज करते हुए कमरे में आ उपस्थित हुए। बोले "ओह! अब तो असह्य हो उठा है, जब कभी आता हूँ तुम्हें नीला के ही पास बैठा पाता हूँ। काम नहीं, धन्धा नहीं, नीला को काँटों के घेरे समान हमसे अलग कर रक्खा है।"

संकुचित होकर रेवती बोला "आज मुझे एक विशेष कार्य है, इसलिये............"

"कार्य तो है ही, इसी विश्वास से तो आया ही था। आज तुमने सदस्यों को निमन्त्रित किया है न, व्यस्त होगी, यही समाचार आफिस जाने से पूर्व आधे घण्टे का समय निकालकर जल्दी जल्दी चला आ रहा हूँ।

आकर सुन रहा हूँ कि यहीं यह कार्य में व्यस्त हैं । आश्चर्य है ! काम न रहे तो छुट्टी में भी ये ही हैं और कार्य रहे तो यहीं इनके पीछे कार्य है । इस भाँति पीछा न छोड़ने वाले व्यक्ति के साथ हम काम वाले कैसे होड़ कर सकते हैं ? नीली Is it unfair."

नीला ने कहा " डाक्टर भट्टाचार्य में यह दोष है कि प्रधान बात को वह स्पष्ट प्रधानता नहीं दे सकते । वह यहाँ कार्य से ही आये हैं । आप व्यर्थ की बातें करते हैं । 'आये बिना रहा नहीं गया' इसलिए यहाँ आये हैं । यह बात सत्य है और सुनने लायक भी । इन्होंने मेरे सारे समय पर जिद करके अपना अधिकार कर रखा है । यही इनका पौरुष है । तुम सबको ईस्ट बंगाल के सामने हार माननी पड़ेगी ।'

"अच्छी बात है तो फिर हमें भी अपने पौरुष का प्रदर्शन करना पड़ेगा । अब भविष्य में जागरण-समिति के सदस्य नारी गण की चर्चा प्रारम्भ करेंगे और पौराणिक युग अब फिर से दृष्टिगोचर होने लगेगा ।"

नीला ने कहा "सुनने में बड़ा आनन्द आ रहा है । नारी हरण पाणि-ग्रहण से श्रेष्ठ है । नियम क्या २ होंगे ?"

हालदार ने कहा "अभी दिखला सकता हूँ ।"

"अभी !"

"हाँ अभी ।"

यह कह कर उसने नीला को तुरन्त सोफे पर से अपने हाथों में उठा लिया । हँसती, चिल्लाती नीला उठके गले में लिपट गई ।

रेवती का मुँह स्याह पड़ गया । उसके लिये सबसे अधिक परेशानी यह है कि उसमें मुकाबिला करने की शारीरीक शक्ति नहीं । वह नीला पर क्रोधित अधिक होने लगा कि वह क्यों इन सब असभ्य गँवारों को इतना सिर चढ़ाती है ।

हालदार ने कहा "गाड़ी तैयार है। मैं तुम्हें डायमण्ड हारबर ले चल रहा हूँ। आज शाम को भोज में वापिस पहुँचा जाऊँगा। बैंक में काम था। उसे चूल्हे में जाने दीजिये। एक शुभ कार्य हो जायगा। डा० भट्टाचार्य के लिये एकान्त में कार्य करने की सुविधा किये देता हूँ। तुम्हारी जैसी बड़ी बाधा को यहाँ से खिसका कर ले जाना ही अच्छा। इसके लिये डाक्टर मुझे धन्यवाद देंगे।"

रेवती को नीला में छटपटाने के कोई लक्षण नहीं दिखलाई दिये और न अपने आपको छुड़ाने का उसने कोई प्रयत्न ही किया। बड़े आराम से वह हालदार की छाती से चिपकी रही। अशक्त सी बनकर उसके गले में बाँहें डाले रही। जाते जाते बोली "डरने की कोई बात नहीं है, विशानो साहब, यह नारी हरण का रिहर्सल मात्र है—लङ्का पार नहीं जा रही हूँ, पार्टी के समय पर वापिस आ जाऊंगी।"

रेवती ने लिखे हुए सब कागज फाड़ कर फेंक दिये। हालदार का बाहुबल और निर्लज्जता से नीला को उठाने की तुलना करते हुए आज उसे अपना विद्याभिमान व्यर्थ ही सिद्ध हुआ।

आज सांयकाल एक प्रसिद्ध होटल में सहभोज था। निमंत्रित करने वाले हैं स्वयं रेवती भट्टाचार्य और उनकी सम्मानिता पास में बैठी हुई नीला। नृत्य एवं गायन के लिये सिनेमा की विख्यात नटी बुलवाई गई है बाँके विहारी टोस्ट परोसने के लिये उठा। रेवती और उस के साथ नीला का गुण गान किया जाने लगा। महिलायें, यह प्रमाणित करने के लिये कि वे कोरी महिलाऐं ही नहीं हैं, खूब जोरों से सिगरेट फूंक रही हैं। नवयोवनाओं की भाँति शृङ्गार कर प्रोढाऐं अपना चेहरा सुन्दर बना हर प्रकार के हाव भावों को प्रगट कर खूब जोर से हँसती हुई एक दूसरी की देह को मसक मसक कर छेड़ रहीं हैं और स्पर्धा में नवयुवतियों से अधिक उन्मत्त दिखलाई दे रही हैं।

इतने में सोहनी ने सहसा प्रवेश किया। उसे देखकर वहाँ सब के सब स्तब्ध से रह गये। सोहनी ने रेवती की ओर देखकर कहा "पहिचानने में नहीं आरहे हो। क्या आप डा० भट्टाचार्य हैं? यन्त्र के लिये रुपये मँगाये थे पिछले शुक्रवार को भेज दिये थे। यहाँ स्पष्ट तौर पर तो किसी चीज की कमी मालुम देती नहीं। अब जरा उठना पड़ेगा। आज रात को लैबोरेटरी की लिस्ट के अनुसार सब सामान मिलाकर देखना है।"

"आप मुझ पर अविश्वास करती हैं?"

"अब तक तो अविश्वास नहीं किया था। किन्तु यदि तुम में अब कुछ भी लाज शर्म बाकी हो तो तुम्हें विश्वास की बात अपने मुहँ से नहीं कहनी चाहिये।"

रेवती उठना ही चाहता था कि नीला ने उसका कुरता खींच कर उसे बैठा लिया। और बोली 'माँ! जानती हो आज पैंसठ अतिथि हैं? इस कमरे में सब नहीं आसकते, एक दल बगल के कमरे में है, सुन रही हो न?' यह कहकर वह जोर से हँस दी "प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से पच्चीस रुपये का बिल बनेगा यदि कोई शरबत न भी पीए तब भी दाम वसूल किये ही जायेंगे। खाली गिलासों का भी जुरमाना कम नहीं लगेगा, और कोई होता तो चेहरा फक पड़ जाता। इनकी जिन्दा दिली देखकर बैंक के डाइरेक्टर तक दंग रह गये। मालूम है सिनेमा की गाने वाली को कितना देना पड़ेगा? उस का एक रात का चार्ज चार सौ रुपया होगा।"

रेवती का मन अन्दर ही अन्दर मछली की भाँति तड़फड़ाने लगा। चेहरा फक पड़ गया, तथा मुह में बोल नहीं रहा। सोहनी ने पूछा "आज का समारोह किस लिए है?"

"क्या यह भी नहीं मालूम एसोसियेटेड प्रेस में तो निकल चुका है कि आप-जागरण क्लब के प्रेसीडेन्ट बने हैं। उसी के सम्मान में यह भोज

है। आजीवन सदस्यता के छः सौ रुपये सुविधानुसार पीछे दे दिये जायेंगे।"

"शायद सुविधा अब शीघ्र न हो सके।"

रेवती का हृदय भीतर ही भीतर भमक रहा था।

सोहनी ने उससे पूछा "तब क्या तुम्हें अभी उठने की फुरसत नहीं है?"

रेवती ने नीला के मुँह की ओर देखा उसके तीव्र कटाक्ष की मार सहन न करके पुरुष का स्वाभाविक अभिमान जाग्रत हो उठा "बतलाइये कैसे जाऊँ, निमंत्रित लोग सब······"

सोहनी ने कहा "अच्छा तब तक मैं यहीं बैठी हूँ। नसर उल्ला! तुम दरवाजे पर हाजिर रहो।"

नीला ने कहा "यह तो नहीं हो सकता, माँ! हम तो यहाँ गुप्त परामर्श करना चाहते हैं, इसलिये तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं है।"

"देख, नीला! चतुराई में तू अभी मुझसे आगे नहीं बढ़ी है। तूने अभी जिस काम को प्रारम्भ किया है उसे मैं बहुत पहिले ही करके छोड़ भी चुकी हूँ। तुम लोगों का क्या गुप्त परामर्श है, क्या यह मैं नहीं जानती। मैं कहे देती हूँ कि तुम्हारे इस परामर्श के लिये मेरा यहाँ रहना बहुत जरूरी है।"

नीला ने कहा "तुमने क्या सुना है?"

"किसी बात की खबर लेने के लिये साँप के बिल की भाँति गहरी थैली में रुपये चाहिये।। तुम तीन२ कानूनदाँ दस्तावेजों को देखकर यह जानना चाहते हो कि लैबोरेटरी फण्ड में कोई ऐसी खामी है कि नहीं कि जहाँ से रुपया हाथ लग सके। बस नीला! यही बात है या नहीं?"

नीला ने कहा "मैं हमेशा सच्ची बात ही कहूँगी। बाप के धन में बेटी का कोई भाग न हो यह बात असम्भव है। इसी से सब सन्देह करते हैं।"

सोहनी कुर्सी से उठ खड़ी हुई; बोली "प्रधान सन्देह की नींव और भी कुछ पहिले की है। तेरा बाप कौन है और तू हिस्सा किसकी सम्पत्ति का चाहती है? ऐसे आदमी की लड़की है तू-तुझे कहने में लज्जा नहीं आती?"

नीला ऐसी उछली मानो कि पैरों तले साँप पड़ गया हो। बोली "क्या कह रही हो, माँ!"

"सच ही कह रही हूँ। उनसे कुछ भी छिपा नहीं था, वह सब जानते थे। उनसे मुझे जो कुछ मिलना था सब मिल चुका, और आज भी मिलेगा। और किसी की उन्होंने कभी परवाह ही नहीं की।"

बैरिस्टर घोष ने कहा "मगर आपके मुँह की बात से सब प्रमाणित हो जायगा।"

"वह इस बात को जानते थे इसलिये सब बातें खुलासा करके वसीयत नामे की यह रजिस्ट्री करवा गये हैं।"

"अरे भाई बाँके। बहुत रात हो गई है। अब क्यों, उठो चलो।"

पठान सिपाही का रंग ढंग देखकर पैंसठ के पैंसठ सदस्य नौ दो ग्यारह हो गये।

इसी बीच में हाथ में सूटकेश लिये हुए चौधरी साहब आ धमके। बोले 'तुम्हारा तार पाकर दौड़ा चला आ रहा हूँ। क्योंरे, रेबी, तेरा

चेहरा इतना सफेद क्यों हो गया है ? अरे कोई है, बच्चे को दूध का कटोरा तो ले आ।"

नीला की ओर इशारा करके मोहनी ने कहा "जो लाने वाली है वह यह बैठी है।"

"बेटी, क्या ग्वालिन का कार्य करने लगी हो ?"

"नहीं ग्वाला फँसाने का काम आरम्भ किया है, शिकार सामने बैठा है।"

"कौन ? क्या अपना रेवी ?"

"आखिर मेरी लड़की ने ही मेरी लैबोरेटरी बचाई है। मैं आदमी नहीं पहचानती, किन्तु मेरी लड़की ने ठीक पहचान लिया था कि मेरी लैबोरेटरी में ग्वाला बैठा है। गोबर के कुण्ड में सब डूबने ही वाला था, बाल बाल बच गया।"

अध्यापक ने कहा "बेटी, जब तुमने ही इसका उत्थान किया है तब तुमको ही इसका भार भी अपने ऊपर लेना होगा। इसके पास और तो सब है किन्तु बुद्धि नहीं है। यदि तुम इसके साथ रहोगी तो यह कमी भी दूर हो जायगी। मूर्ख पुरुष की नाक में नकेल डालकर चलाना बहुत सरल कार्य है।"

नीला ने कहा "क्यों जी, सर आइज़क न्यूटन। रजिस्ट्री आफिस में नोटिस तो दे चुके हो—क्या अब उसे वापिस लेना चाहते हो ?"

सीना तानकर रेवती ने कहा "मर जाने पर भी नहीं।"

"तब क्या अशुभ लग्न में ही विवाह होगा ?"

"हाँ होगा अवश्य ही होगा।"

सोहनी ने कहा "किन्तु लेबोरेटरी से सौ हाथ दूर।"

अध्यापक ने कहा "बेटी नीलू! यह मूर्ख अवश्य है, किन्तु असमर्थ कदापि नहीं। इसका नशा उतर जाने दो, फिर देखना भोजनों की विशेष चिन्ता न रहेगी।"

"सर आइजक! तब तुम्हें कदाचित भद्रों जैसे ही कपड़े लत्ते बनवाने होंगे, अन्यथा तुम्हारे सम्मुख मुझे घूंघट निकालकर रहना पड़ेगा।"

सहसा दीवाल पर एक और छाया पड़ती दिखलाई दी। बुआजी आ खड़ी हुई, बोली "रेवी घर चल।"

चुपचाप उठकर रेवती बुआजी के पीछे २ चल दिया, उसने एक बार पीछे फिरकर नहीं देखा।